मानव मन्दिर

3/87

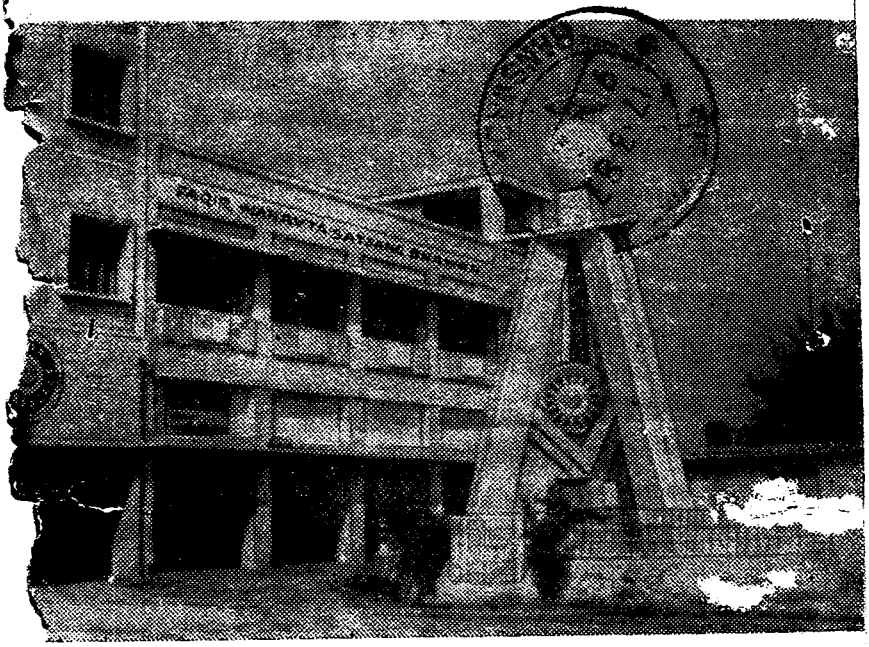

फकीर लायब्रेरी चैरीटेबल ट्रस्ट

सुतेहरी रोड, होशियारपुर

द्वारा अमूल्य भेंट

FORM I

(See Rule 8)

Place of Publication	Hoshiarpur
Date of Publication	10th of every month
Periodicity of Publication	Monthly
Printer's Name	Dr. Paras Ram Aggarwal
Nationality	Indian
Address	Manavta Mandir. Hoshiarpur.
Editor's Neme	Dr. Paras Ram Aggarwal
Nationality	Indian
Address	Manavta Mandir, Sutehri Road, Hoshiarpur.
Name and address of individuals, who own the Manav Mandir of partners of shareholders, holding more than one Percent of the total capital	- Faqir Library Charitable Trust, Hoshiarpur.

I, Dr. Paras Ram Aggarwal hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Dated :

Signature of Publisher

Printed and Published by : Dr. Paras Ram at Shiv Dev Rao Press. Manavta Mandir Hoshirapur. for the Faqir Library Charitable Trust, Hoshiarpur.

मानवता मन्दिर में अगला मासिक सत्संग
15-3-87 को होगा ।

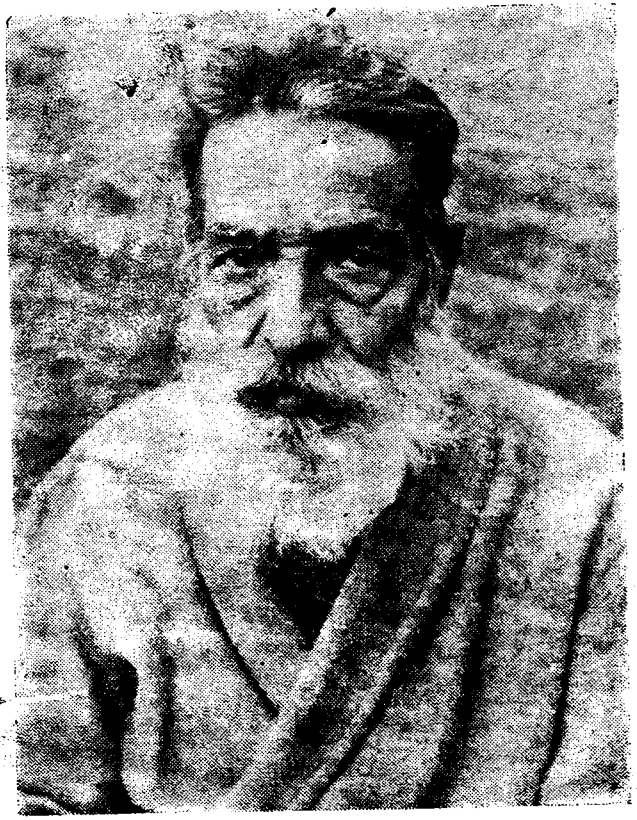

Param Sant Param Dayal Faqir Chand ji Maharaj

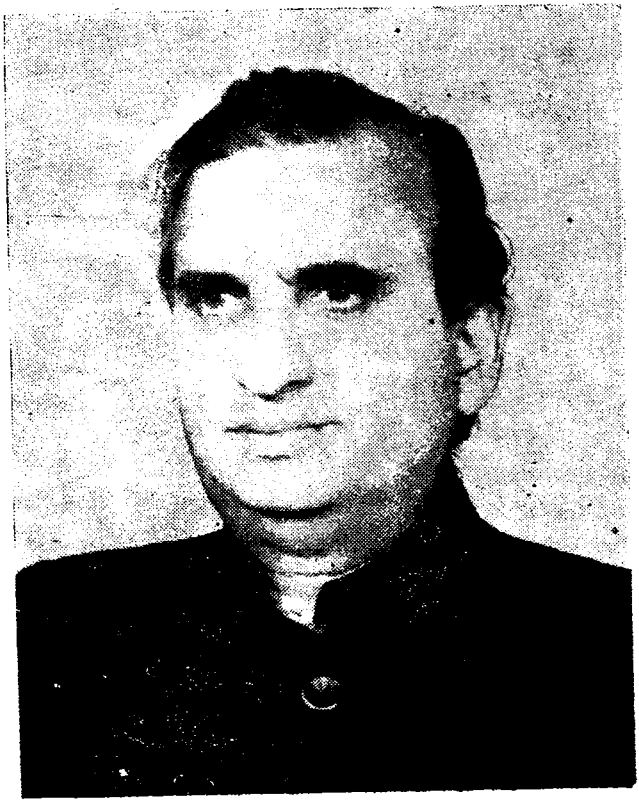

Param Sant Manav Dayal **Dr. I. C. Sharma ji Maharaj**

मासिक—

मानव मन्दिर

विश्व में मानव मात्र के सामाजिक सांस्कृतिक
और आध्यात्मिक कल्याण और विकास की
सेवा में संलग्न मासिक पत्र

सम्पादक :

डा० परस राम अग्रवाल

वर्ष 13	मंगलवार 10 मार्च 1987	संख्या 11

सत्संग हजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज

किस्सा पँचमुहा अजदहा (अजगर)

(1)

सुरत शिरोमणि नौजवान आदमी था। वह प्रकृति से नया दिल व दिमाग लेकर आया था। वह जिस वंश में पैदा हुआ था उसकी सूझबूझ अच्छी नहीं थी, पर वह सूझबूझ वाला था। सूझबूझ वालों के मध्य तो नादान आदमी का निर्वाह हो जाता है, परन्तु नादानों के साथ सूझबूझ वालों का निर्वाह मुश्किल से होता है। सुरत शिरोमणि के सभी गुण उनकी नज़रों में बुरे मालूम होते थे और और हर समय खटपट हुआ करती थी। बेचारा बहुत तंग आ गया। आखिर मजबूर होकर उसने घर छोड़ दिया और ऐसी संगति की खोज में बाहर निकल पड़ा जहाँ कि उसकी मानसिक भावनाओं की उन्नति हो सके।

उदाहरण प्रसिद्ध है 'जो खोजे सो पावे'। एक दिन उसकी भेंट किसी जगह एक आदमी से हुई जिसका नाम शब्द शिरोमणि था। उसने उसे देखा और उसी देखादेखी में दोनों के दिल मिल गये, पूछताछ की ज़रूरत तक नहीं हुई और यह कोई नई और अजीब बात नहीं है। हमारी कई बार सड़क पर चलते हुए ऐसे व्यक्तियों से भेंट हो जाती

है जिनसे बिना हिचकिचाहट बातचीत करने को दिल चाहता है तथा कई ऐसी सूरतें नज़र आती हैं जिनको देखने ही से दिल घबराता है और उनसे दूर भागना चाहता है।

शब्द शिरोमणि साफ दिल, जिस्म और विचारों वाला व्यक्ति था। सुरत शिरोमणि को देखकर खुश हुआ। उसने पूछा—"तुम कौन हो? कहाँ से आये हो? और कहाँ जा रहे हो?" उसने जवाब दिया—"यही तो बातें हैं जिनको मैं नहीं जानता और जिनको जानने की मेरी इच्छा है। मैं जिनसे प्रश्न करता हूँ वे मेरी सादगी और सादापन पर हँसते हैं और मुझे नासमझ समझते हैं। उनका यह व्यवहार मेरी परेशानी का कारण होता है।"

शब्द शिरोमणि—"फिर तुमको बुरा मानने की ज़रूरत कब है! तुम नादान हो तब ही तो ऐसे प्रश्न करते रहते हो।"

सुरत शिरोमणि—"मुझे बुरा नहीं लगना चाहिए, यह मैं समझता हूँ लेकिन हैरानी यह है कि कोई मेरे प्रश्नों का उत्तर नहीं देता और बिना मतलब मेरी हँसी उड़ाई जाती है।"

शब्द शिरोमणि—"तो तुमने इन प्रश्नों को हल करने के लिए सफर आरम्भ किया है।

सुरत शिरोमणि—"बात तो ऐसी ही है और अगर आप कृपा करके मेरे उन प्रश्नों का उत्तर देंगे तो मैं जीवन भर आपका आभारी हूंगा।"

शब्द शिरोमणि—"उत्तर तो मैं जानता हूँ, परन्तु उस समय तक जवाब नहीं दूंगा जब तक मेरी शर्त को पूरा न करोगे। मेरी शर्त पूरी करो और तब मेरी जबानी अपने प्रश्नों के उत्तर सुनो।"

सुरत शिरोमणि—"वह शर्त क्या है?"

शब्द शिरोमणि—"एक जगह पर एक पाँच मुख वाला अजगर रहता है। तुम उसे मार कर आओ तब मैं तुमको उत्तर दूंगा।"

सुरत शिरोमणि—"खूब, यक न शुद दो शुद (एक के बजाय दो हो गये) चले थे नमाज़ छुड़ाने, रोज़े गले पड़े। इस पाँच मुख वाले अजदहे से मेरे प्रश्नों का क्या सम्बन्ध है ?"

शब्द शिरोमणि—"सुनो भी, मुझे अधिक बातें बनानी नहीं आतीं। अगर तुम मेरी शर्त को पूरा करो तो अपने प्रश्न का उत्तर सुनो। यदि स्वीकार नहीं तो अपना रास्ता लो। न मेरा वक्त खराब हो, न तुम्हारा। अल्लाह-अल्लाह खैर सल्लाह।"

सुरत शिरोमणि ने कुछ देर तक दिल में सोचा और सोच-समझकर जवाब दिया—"मुझे तुम्हारी शर्त दिल से मंजूर है। मुझे अजदहे का पता दो और मैं उसको मारने का उपाय सोचूंगा क्योंकि चाहे कुछ भी हो मुझे अपने सवालों का जवाब लेना ज़रूरी है।"

शब्द शिरोमणि—"शाबाश, तब तुमको प्रश्नों के ठीक उत्तर भी मिलेंगे। लोग यं ही ख्वाहमख्वाह सुने-सुनाये प्रश्न किया करते हैं बिना सोचे-समझे। इस किस्म के ज़बानी जमा-खर्च करने वाले बातों के पकवान खाने के आदी रहते हैं और उनको कभी तसल्ली नहीं होती है।"

(2)

सुरत शिरोमणि को शब्द शिरोमणि की बातों से इस क़दर खुशी हुई कि वह एकदम उठा, खड़ा हुआ जैसे उसने इसी वक्त अजगर के मारने के लिए हिम्मत की कमर कस ली हो।

शब्द शिरोमणि ने कहा, "सुनो भाई। जल्दबाज आदमी का काम नहीं है। जल्दबाज आदमी उस खतरनाक

अजगर को मार नहीं सकते। इस किस्म के हज़ारों आदमी उसको मारने के लिए गये और उनमें से एक भी ज़िन्दा बचकर नहीं आया। यहाँ पक्के विश्वास वाले, पक्के दिल वाले और अटल रहने वाले आदमी की ज़रूरत है। क्या तुममें इस किस्म के गुण मौजूद हैं ?"

सुरत शिरोमणि—"तुम आप देख लोगे कि मैं किस हौसले और हिम्मत से काम करता हूँ। स्वयं ही मेरी परीक्षा हो जायेंगी।"

शब्द शिरोमणि—"परीक्षा की बातचीत तो उस समय होगी जब तुम सफल होकर वापस आओगे। इस वक्त उसके बारे में न कोई यकीनी राय कायम कर सकता हूँ और न तुम खुद मुझे विश्वास दिला सकते हो। यह मरने-मारने का रास्ता है। अगर किसी ने अजदहे को मार दिया तो ठीक, वरना फिर उसका पता तक न रहेगा :—

जूझेंगे तब कहेंगे, अब कुछ कहा न जाये।
कौन कहे मन तमसरवरा, लड़े कि वह मुड़ आये॥

सुरत शिरोमणि—"आप तो तजुर्बाकार आदमी हैं! क्या मेरी आँखें और पेशानी देखकर मालूम नहीं कर सकते ? मुझमें पक्के इरादे की कमी नहीं है !"

शब्द शिरोमणि ने सुरत शिरोमणि की आँख और पेशानी को ग़ौर से देखा—"मुझे विश्वास हो गया ; तुम्हारा अन्दाजा ठीक है। तुम्हारी आँखों में समता का नूर है और पेशानी चौड़ी है। इनको देखकर मुझ विश्वास तो हो गया कि तुम संगदिल (पत्थर दिल) और तंग ख्याल नहीं हो बल्कि खुले दिल और खुले ख्याल के हो। उस अजदहे को सिर्फ ऐसा ही आदमी मार सकता है।"

सुरत शिरोमणि—"और उसका रास्ता ?"

शब्द शिरोमणि—"उसका रास्ता नाक की सीध में

है न दायें झुको न बायें ; सीधे चले जाओ। इसी रास्ते के अन्दर वो अजदहा अपने पाँचों मुँह खोलकर पड़ा रहता है।"

सुरत शिरोमणि—"तब कोई उस रास्ते से कैसे जाता होगा ? वह तो आने-जाने वालों को डस लेगा।"

शब्द शिरोमणि—"यूँ तो नादान आदमी इधर-उधर से गुज़रते ही रहते हैं। अजदहा न उनसे कोई एतराज करता है, न हमला करता है, क्योंकि उसे उस बात का ज्ञान है कि ये मामूली आने-जाने वाले पहले से ही उसके मुँह में हैं। वह जब चाहेगा उन्हें अपने मुँह का ग्रास बना लेगा। हाँ अगर कोई इसके मारने की नीयत से जाता है तो वह उसे नहीं छोड़ता।"

सुरत शिरोमणि—"यह बहुत मुश्किल बात है जिसे मैंने अभी तक नहीं समझा। वह रास्ते में पड़ा हुआ है और उसके पाँचों मुँह फैले हुए हैं तो कैसे कोई विश्वास करे कि वह किसी पर हमला न करेगा ?

फर्ज़ी तौर पर अगर मैं मान भी लूं कि वह एतराज़ न करता होगा तो आखिर जो लोग उसे देखते होंगे उनकी जान तो डर से निकल जाती होगी !

शब्द शिरोमणि—"यही तो बात है जिसे लोग नहीं समझते, और तुमने भी उसे नहीं समझा। बात यह है कि अजदहा तो मुँह खोले हुए पड़ा सोता रहता है और आने-जाने वालों को नज़र नहीं आता। न उसे उनकी तरफ ध्यान देने की ज़रूरत है और न यह किसी को नज़र आता है। जिसने इसे देख लिया फिर वह उसका दुश्मन हो जाता है और उसके आक्रमण से ज़िन्दगी का बचाना बहुत कठिन हो जाता है।"

सुरत शिरोमणि—क्या इसे आप किसी मामूली मिसाल से मुझे समझा सकते हैं ?

शब्द शिरोमणि—"क्यों नहीं! लेकिन मिसाल का सिर्फ एक पहलू नज़र के सामने रखना चाहिए जैसे कोई कुत्ता चौरस्ते में सोता हो। सीधा-सादा आदमी, जिसमें छेड़-छाड़ करने की नीयत नहीं है, चला जाये तो कुत्ता चुपचाप पड़ा रहेगा। लेकिन अगर किसी में कुत्ते को डराने और धमकाने का ख्याल है तो वह कुत्ता चौकन्ना होकर उसके पीछे भौंकने लगेगा और जब तक उसे गाँव के बाहर न पहुँचा देगा तब तक चैन न लेगा, चाहे उसको काटकर तब रहेगा। यही हालत उस अजदहा की भी है।"

सुरत शिरोमणि—"मैं समझ गया। चूंकि इसके मारने का ख्याल है इसलिए वह मुझपर हमलावर होगा—वरना नहीं। लेकिन एक बात है। आपने इसके मारने की शर्त क्यों लगा रखी है? वह मासूम (नादान) है पड़ा रहे। मेरा क्या नुक़सान करता है?"

शब्द शिरोमणि—"अगर तुम उसके मारने के लिए तैयार नहीं हो तो जाओ अपना रास्ता पकड़ो। प्रभु तुम्हारी रक्षा करें। सवाल का जवाब तो मैं उस वक्त दूंगा जब तुम उसे मारकर आओगे।"

सुरत शिरोमणि—"खैर! मालिक कल्याण करें मैं जी-जान से उसे मारने के लिए तैयार हूँ। क्योंकि मुझे अपने सवालों का जवाब लेना ज़रूरी है।"

शब्द शिरोमणि—"तब मैं तुमको एक डंडा देता हूँ। इसको हाथ में रखो। यह डडा तुम्हें सीधे रास्ते पर ले जायेगा। रास्ते से भटकने नहीं देगा और तुम ग़लती में न पड़ोगे।"

सुरत शिरोमणि ने डंडा हाथ में लिया। कौन जाने इस डंडे के अन्दर क्या शक्ति थी कि उसके पाँव स्वयं ही खुशी से चलने लगे।

शब्द शिरोमणि ने उसकी दशा देखकर खुशी प्रकट की—"देखो सुरत शिरोमणि। अगर तुम इस डंडे के सहारे बराबर नाक की सीध की ओर चलते जाओ तो यह डंडा अपने आप तुमको हिदायत करता चलेगा कि किस जगह पाँव संभाल कर चलना है, कहाँ हल्का और भारी होना है, और किस जगह दाखिल होकर काम बनाना है, और किस जगह से बचकर चलना है। जब तक तुम ऊँचे टीले पर न पहुँचोगे तब तक तुम न अजदहे को देखोगे और न वह छेड़ेगा। जब तुम टीले की चोटी पर पहुँचोगे और ऊँचे चढ़ जाने की वजह से जब नीचे दृष्टि करोग तो अजदहा को पाँचों मुँह खोले हुए देखोगे और वह भी डरकर तुम्हें हड़पने की कोशिश करेगा। लेकिन खबरदार! डंडे को कभी हाथ से न छोड़ना वरना फिर तुम्हारे लिए खैरियत नहीं है। यह डंडा बड़े सहारे की चीज़ है; यह सच्चे साथी का काम देगा।

(3)

सुरत शिरोमणि ने शब्द शिरोमणि के डंडे को हाथ में लेकर नाक की सीध में चलने का संकल्प किया। आखिरकार शब्द शिरोमणि ने उसे रोका। "जब तुम टीले पर पहुँचोगे, पंचमुहे अजदहे को तो देख लोगे। इससे तुमको मेरी बात पर विश्वास हो जायेगा। लेकिन सिर्फ देख लेने से तुम उस पर हमला न कर सकोगे। टीले से ऊपर ज़रा एक वादी आती है उसके नीचे तीन औरतें रहती हैं। ये तीनों अन्धी हैं। इनके कब्ज़े में एक लाल रात्रि चिराग़ है। वे बारी-२ से जब इसको अपनी दोनों आँखों के बीच में लगाती हैं तब उन्हें नज़र आता है; वरना नहीं। टीले से ऊपर चढ़ कर तुमको अत्यन्त सावधानी के साथ इनके हाथ से लाल रात्रि चिराग़ को छीनना पड़ेगा। इसकी यह तासीर है कि यह जिसके

पास रहता है, पंचमुहा अजदहा उस पर वार नहीं कर सकता ; जिसका प्राप्त करना जरूरी है।"

सुरत शिरोमणि—"अब यह बताइये कि आप राह बता कर मुझसे जुदा हो जायेंगे, या साथ-२ रहेंगे ?"

शब्द शिरोमणि—"मैं तुम्हारे साथ रहूँगा। हाँ, काम तुमको करना होगा ; मैं कुछ न करूंगा।"

सुरत शिरोमणि—"इसकी कोई चिन्ता नहीं ; मुझे किसी किस्म का डर नहीं रहेगा, अब आप चलिये ; ज्यादा देर करने का विचार नहीं है।"

और सुरत शिरोमणि व शब्द शिरोमणि दोनों साथ-२ नाक की सीध की ओर चल पड़े।" (क्रमशः)

नोट :—इस सत्संग के विशेष शब्दों के अर्थ अप्रैल मास के मानव मन्दिर में इस सत्संग की समाप्ति पर दिये जायेंगे। पाठकगण नोट कर लें।

सत्संग परमदयाल

फ़कीर चन्द जी महाराज

(माह फरवरी पृष्ठ 19 से आगे)

कर्म का फल

आपने कबीर साहिब का शब्द सुन लिया। इसके अतिरिक्त महाभारत से भी तो हमको इसी प्रकार की शिक्षा मिलती है। कहा गया है कि अन्त समय में पाँडवों ने हिमालय पर्वत पर जाकर अपने प्राण त्याग किये। सबसे पहले द्रौपदी की बारी आई। प्रश्न होता है कि सबसे पहिले द्रौपदी की बारी क्यों आई ? उत्तर दिया जाता है कि वह पाँचों पाँडवों की स्त्री होते हुए भी अर्जुन का जो उसे व्याह कर लाया था, पक्ष किया करती थी। इसके पश्चात् नकुल की बारी आई। उसके बारे में यह कहा जाता है कि उसे अपनी सुन्दरता पर घमंड था। फिर भीम का नम्बर आया जिसे अपनी गदा और अपने बल पर अभिमान था। इसी तरह अर्जुन जिसे अपने धनुष-बाण का अहंकार था मृत्यु का ग्रास बना आदि-आदि। सबसे पीछे युधिष्ठिर का नम्बर आया जिसके साथ उनका वफादार कुत्ता था। युधिष्ठिर ने धर्मराज से अपने सम्बन्धियों का हाल पूछा तो बताया गया कि वे सबके सब नरक में गये हैं। उन्हें देखने के लिए

युधिष्ठिर को आज्ञा मिली। उनको थोड़े से समय के लिए इस कारण नरक में जाना पड़ा कि उन्होंने एक बार नीति से पर्दे की आड़ में थोड़ा सा झूठ बोला था कि अश्वत्थामा मर गया 'नरो वा कुंजरो वा' जबकि वे जानते थे कि अश्वत्थामा हाथी ही मारा गया है। अभिप्राय यह है कि मनुष्य जो कुछ अपने जीवन में कर रहा है उसका फल अवश्य भोगना पड़ेगा। इस पर महर्षि जी का एक शब्द सुनिये :—

नर भोगे बारम्बार अवश्य फल कर्म किये का।
यह सोच समझ चित धार, मर्म जग जन्म जिये का॥
सुर नर देवी दव महर्षि, और ब्रह्म अवतारा।
अशुभ कर्म के फल से इनको, मिले नहीं छुटकारा॥
एक जो कहिये राम महाप्रभु, पुरुषोत्तम मर्य्यादा।
गुप्त. घाट सरजू जल बूड़े, रामायण सम्वादा॥
दूजे कहिये कृष्ण विवेकी, सोलह कला के पूरे।
यदु कुल नाश भील की गाँसी, भये मान मद चूरे॥
तीजे युधिष्ठिर धर्मराज की, अकथ अपार कहानी।
भाई भारजा संग गले हिम, सो सब कोई जानी॥
चौथे वशिष्ठ महा मुनि ज्ञानी, देखा कुल का नाशा।
विश्वामित्र के हाथ पलट गया, ज्ञान योग का पासा॥
पंचम दशरथ अवध नरेशा, श्रवण ऋषि को मारा।
पुत्र वियोग प्राण को त्यागा, मिला न राम सहारा॥
छठे इन्द्र की करनी समझो, शाप बृहस्पति दीना।
भगमय देवराज की काया, कर्म का फल यह लीना॥
चन्द्र कलंकित काम वेग से, जाने सब संसारा।
करम अटल है महाबली है, कोई कोई करे विचारा॥
रावण-बालि भरत जड़ ज्ञानी, ऋषि के सुत दुर्वासा।
कर्म किया तैसा फल पाया, अन्त में भये उदासा॥

सुन प्रसंग चित अपना सोधो, सोधो मन कर्म बानी।
शब्द योग कर जन्म बनाओ, राधास्वामी की सहदानी॥

मित्रो ! कर्म का फल अवश्य भोगना होगा। इसे एक क्षण को भी न भूलो और ऐसे कर्म करो जो सुखदायी हों न कि दुःखदायी। इसी आधार पर साधुओं, महन्तों और आचार्यों से पूछा जा सकता है कि तुम आप ही फैसला करो कि तुम्हारी क्या दशा होगी ? इस कर्मफल के सिद्धान्त को जानता हुआ मैं डरता हूँ और किसी से किसी प्रकार का हेरफेर नहीं करता। चाहूँ तो भोलेभाले सत्संगियों को जितना चाहूँ लूट लूं। यहाँ जो लायब्रेरी बनाई गई है उसके नाम से धन इकट्ठा करूँ मगर नहीं। मेरा अन्तःकरण मुझे आज्ञा नहीं देता, विशेषतया इसलिए कि सब मेरे ही रूप हैं। धोखा किससे किया जाये।

मैं फिर कहता हूँ कि कर्म का फल अवश्य ही भोगना पड़ेगा। इसी प्रकार जो तुम कर रहे हो उसका क्या परिणाम होगा उस पर विचार करो। बड़े-बड़े महापुरुष जब कर्म के फल से न बच सके अर्थात् शम्स तबरेज की खाल उतारी गई, महात्मा गांधी जैसे पवित्र महापुरुष को गोली से मार दिया गया, तो फिर तुम्हारी हैसियत ही क्या है जो इससे बच निकलोगे। अपना किया हुआ तो भोगना पड़ेगा। मेरी नीयत शुद्ध है इसलिए जो कुछ भी मेरी समझ में आता है निर्भय होकर कहता रहता हूँ। मैं समझता हूँ कि तुम में द्वेष की अग्नि प्रज्वलित है जिसके कारण दुःख पा रहे हो और यह द्वेष बिना ज्ञान के दूर न होगा। घरों की दशा शोचनीय है। कितनी अनबन है जो केवल द्वेष और घृणा का परिणाम है। इनका मूल कारण अज्ञान है। इसी कारण खुशहाली कोसों दूर है। मन को पवित्र करो ताकि यह थोड़े दिन का जीवन सुख से व्यतीत हो जाये।

सन् 1940 ई० का जिक्र है कि मेरे घर का वातावरण दूषित था। उन दिनों मैंने अपने लिए होशियारपुर में ज़मीन खरीदी थी। वह परदेश था। मेरा दामाद वहाँ आया। कहने लगा, मकान में इस तरह की अदला-बदली कीजिये कि यह आवश्यकता पड़ने पर दो बराबर हिस्सों में बट जाये ताकि एक-एक हिस्सा दोनों लड़के ले सकें। मैंने उत्तर दिया "तुमको दुनियादारी के सूक्ष्म रहस्यों का क्या ज्ञान है ? इतना बहुत समझो कि दोनों में से एक जीवित रहे।" बात आई, गई। थोड़े समय के बाद मेरा एक लड़का बीमार हुआ। डाक्टर ने कहा साधारण मलेरिया ज्वर है। मैंने कहा—"आप पूरा ज़ोर लगाइये मगर बचेगा नहीं।" वह कुछ दिनों में ही चलबसा। आप पूछ सकते हैं कि मैं ऐसी भविष्यवाणी किसी-किसी समय कैसे कर देता हूँ ? इसका उत्तर यह है कि उस समय का वातावरण मुझे भविष्य के परिणाम की सूझ सुझा देता है और बस ! मेरी चित्तवृत्ति अत्यन्त सूक्ष्म (Sensitive) है इसलिए तुरन्त परिणाम पर पहुँच जाता हूँ।

यह मानी हुई बात है कि प्रत्येक परिणाम या कार्य का कोई न कोई कारण अवश्य होता है। अब जो कुछ मैं सत्संग का काम करता हूँ यह मेरा ही संकल्प था। इसे कर्मभोग कह लो या विवशता। इसी तरह आप भी अपनी बात सोच कर परिणाम निकाल सकते हो।

मेरा लड़का पदम जंग इंजीनियरिंग में पढ़ना चाहता था। मैंने सोचा कि इसके खर्चे के लिए रुपये का कैसे प्रबन्ध किया जाये। किसी सत्संगी से रुपया उधार नहीं लेना चाहिए यह फैसला किया। फिर सोचा कि उसके चचा से जिसकी मैंने सहायता की थी रुपया ले लिया जावे। वह ब्याज भी नहीं लेगा। यह बात मैंने अपनी स्त्री से कही। स्त्रियों में

साधारणतया ईर्ष्या, द्वेष अधिक होता है। कहने लगी रुपया तो उनसे ले लिया जा सकता है मगर किसी समय उनकी घर वाली ने या उन्होंने आप ही ताना मारा तो क्या इज्ज़त रहेगी! पदम भी पास बैठा था मैंने उसे इशारा किया, कहा—"अपनी माताराम का रवैया देख रहे हो? मेरे पास थोड़ी सी पूंजी है जो मैं तुम्हारी बहिन के विवाह में खर्च करना चाहता हूँ। यह पूंजी खर्च हो गई तो तुम्हारी बहिन की उम्र भी कम होती जायेगी।" उसने कहा—"कैसे?" मैंने उत्तर दिया—"मेरा इल्म ऐसे ही बताता है।" चुनाचे थोड़े दिनों के पश्चात् मेरी लड़की बीमार पड़ गई और दिन-ब-दिन उसकी हालत खराब होने लगी। उसका मामा आया। इलाज शुरू किया। मैंने उससे कहा कि इसे आराम होना कठिन है और वह 3½ माह तक चारपाई पर पड़ी रही। फिर मैंने अपनी स्त्री को समझाया, कहा—"इसके रोग का कारण है और वह यह है कि मेरी थोड़ी सी पूंजी जो उसके लिए जमा है खर्च होती जा रही है। तुम अपने हृदय को शुद्ध करो। पदम के चचा को पदम की शिक्षा के लिए सहायता कर लेने दो, तब यह चंगी हो जायेगी।" वह फिर मान गई और लड़की शीघ्र ही अच्छी हो गई।"

यों तो मैं अपना कर्त्तव्य निभा रहा हूँ अथवा यूं कहूँ कि अपनी इच्छा का फल भोग रहा हूँ फिर भी इतना कहना पड़ता है कि आप लोग कभी-कभी मुझे बहुत तंग करते हैं। प्रत्यक्ष रूप में किसी-किसी समय तंग भी हो जाता हूँ मगर वास्तव में शान्तिमय हूँ क्योंकि जब चाहता हूँ अपने स्वरूप में लय हो जाता हूँ और उस महासागर में जा मिलता हूँ जो शान्ति का भण्डार कहा जा सकता है। यह सब सुरत-शब्द योग के साधन की बदौलत है, जिसकी शिक्षा सन्तमत या राधास्वामी मत देता है।

मित्रो ! मैं आप लोगों को अपने घर की गुप्त बातें केवल इसलिए बताता रहता हूं कि आपकी आँखें खुल जायें और आपका जीवन सुधर जाये अन्यथा. कौन ऐसी बातें आपको बताने को तत्पर होगा। प्राकृतिक नियम पग-पग पर काम कर रहा है किन्तु उसको समझ वही सकता है जो समझ-बूझ वाला है। यह न समझो कि मैं सत्संग इसलिए कराता रहता हूं अथवा लेख या पुस्तकें लिखता रहता हूं कि मेरी आमदनी बढ़ जाये किन्तु यह समझो कि आप लोगों की भलाई हर समय मेरी दृष्टि के सामने रहती है। मैं चाहता हूं कि मेरी आवाज़ आपके पथप्रदर्शकों या रहबरों तक पहुंचे मगर यह उनको सुनाई देने वाली नहीं। ऐसे शब्द सुनने से उनकी शान में अन्तर आयेगा। सच्ची बात सुनने को कोई कब तत्पर होता है ? (क्रमशः)

———

सूचना

सभी मानव मन्दिर के पाठकों को सूचित किया जाता है कि जब कभी आपका स्थानान्तरण हो तो कृपया "मानवता मन्दिर" कार्यालय को सूचित कर दें ताकि कार्यालय को डाक का व्यर्थ बोझ न सहन करना पड़े।

सेक्रेटरी :

मानवता मन्दिर।

सत्सग परमसन्त

हजूर मानव दयाल जी महाराज

मानवता मन्दिर होशियारपुर

18—1—87

गुरु की संगत का प्रभाव

गुरु की संगत से हटेंगे, कर्म माया काल सब।
काट देगा तू सहज में, आप ही भव जाल सब ॥
मुख्य साधन संग सत का, और शेष हैं समझ गौण।
इससे सूझेगी परमगति, सद्गति की चाल सब ॥
जिसने पाया पाया सत संग से, भक्ति ज्ञान गम।
तू उतारेगा विवेक और, तरकना की खाल सब ॥
कुछ दिनों संगत हो कुछ दिन, नाम कुछ दिन मुक्त गति।
इसके पीछे पद है सत का, सत की रोती पाल सब ॥
अर्थ धर्म और काम मुक्ति, की है कुंजी सत का संग।
राधास्वामी संग कर, दे काट अब जंजाल सब ॥

नन्दितानि दिगस्तानि यस्यानन्दाम्बु बिन्दुना ।
पूर्णानिन्दं प्रभुं वन्दे स्वानन्दैक्यस्वरूपिणम् ॥
मामवधर्मस्य धातारं दाता दयालस्य प्रियतमम् ।
सन्तधर्मस्य गोप्तारं फकीरं वन्दे जगद्गुरुम् ॥

राधास्वामी !

मेरी अपनी ही आत्मा के स्वरूप सत्संगी भाई और बहनो, आज जेठा रविवार है अर्थात् मकर संक्रान्ति की पूर्णमासी के बाद का इतवार है। मकरसंक्रान्ति माघ महीने में होती है। स्वामी जी महाराज ने अपनी पुस्तक 'सार वचन' में माघ महीने के बारे में लिखा है वह आज पढ़ा गया। सार वचन पुस्तक में 12 महीने दिये हैं, जिसमें स्वामी जी महाराज ने अपना अनुभव एवं विचार बताये हैं। जो कोई लिखता है, सोचता है या अपने विचार प्रकट करता है वह अपनी दृष्टि के मुताबिक करता है, अपने ख्याल के मुताबिक करता है। ख्याल संस्कारों से बनता है लेकिन सन्त पहले से ही संस्कार लेकर आते हैं। हाँ, यह बात ठीक है कि वातावरण के संस्कारों का Radiation का उन पर असर पड़ता है लेकिन उनके जो जन्मजात संस्कार होते हैं वे बहुत शक्तिशाली होते हैं इसलिए जो कानून, जो नियम, जो व्यवहार आम आदमी का है वह सन्त का व्यवहार नहीं है। चाहे साधारण मनुष्य के व्यवहार की तरह ही लगता है और लगना भी चाहिए क्योंकि यदि आप सन्त के अवतार को शुरू से ही अवतार समझ लेंगे, तो सभी लोग मोक्ष को पा जायेंगे और मोक्ष में जगह बहुत थोड़ी है।

आज किसी ने सवाल किया कि क्या कारण है कि नज़दीक रहने वाले लोग नहीं पहचानते। यह बात ठीक है कि नज़दीक रहने वाले लोग नहीं पहचानते। हालाँकि उन्हें पहचान कराने के लिए ही बड़ी कोशिश की जाती है फिर भी लोग नहीं पहचानते। सन्त सबको ऊपर ले जाने की कोशिश करता है अब कोई जाना ही न चाहे तो कोई क्या करे ? इशारों से, अपरोक्ष तरीके से सन्त समझाने की

कोशिश करता है लेकिन फिर भी लोग नहीं समझते। समझना भी नहीं चाहिए। यदि सभी लोग समझ जायेंगे तो बड़ी मुश्किल हो जायेगी। जो लोग मांस खाते हैं उनका कहना है कि शाकाहारी लोग अधिक होने चाहिएँ अगर सभी मांसाहारी हो गये तो मांस महंगा हो जायेगा। भक्ति भी मांस है। सन्त जीवित का आहार करता है, जीते-जागते का आहार करता है। जीवित आहार किसका? आपकी आशाओं का। जिन चीज़ों को आप जीवन समझते हो, जिन आशाओं को, कामनाओं को पूरा करना चाहते हो वह जीवन नहीं है, वह तो मृत्यु है। तो उस जीवनरूपी मृत्यु को हटाने के लिए सन्त आपको हिदायत करता है लेकिन आप मानते नहीं हैं। जीवित आहार का मतलब है कि जिन चीज़ों को आप जीवन समझे बैठे हैं उन चीज़ों को समाप्त करना :—

'या निशा सर्वभूतानां, तस्यां जागर्ति संयमी'।

सत् पुरुष भगवान् श्री कृष्ण ने कहा है कि जो आम लोगों के लिए रात होती है वह सन्त के लिए दिन होता है। जब सब सो रहे होते हैं, उस समय सन्त मालिक से तार लगा रहा होता है। उस समय जो आनन्द होता है उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है :—

'या निशा सर्वभूतानां, तस्यां जागर्ति संयमी।'

सब लोगों के लिए जो रात्रि है, निशा है और सब लोग सो रहे होते हैं :—

तस्यां जागर्ति।

उस समय सन्त जाग रहा होता है और उस समय संयमी पुरुष मालिक के साथ मिला हुआ होता है। वह सोते हुए भी जागता है। वास्तव में आप सब जागते हो, आपको पता नहीं होता। जब आप गहरी नींद के अन्दर सो जाते

हैं; उस वक्त आप शरीर के अन्दर नहीं होते, उस वक्त आप मन के अन्दर भी नहीं होते क्योंकि यदि आप मन के अन्दर होते तो आपको अच्छे या बुरे स्वप्न दिखाई देते। लेकिन जब आप आत्मा के अन्दर होते हैं उस समय आनन्द ही आनन्द होता है, क्योंकि आत्मा प्रकाशमय है। जैसे हमारा स्थूल शरीर है, हमारा मन सूक्ष्म शरीर है और हमारी आत्मा कारण शरीर है, उसी तरह जगत् का स्थूल शरीर है जो दिखाई देता है—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश। इस जगत् का भी मन है। जब मालिक उस मन में होता है तो मन के ख्याल से; सहस्रदल कमल से सारे जगत् की कलाओं को चलाता है। लेकिन मालिक जब अपने कारण शरीर अर्थात् हिरणयगर्भ में होता है, प्रकाशमय शरीर में होता है उस समय मालिक आनन्द की अवस्था में होता है। परन्तु उस आनन्द की अवस्था में भी मालिक जो परमतत्त्व है, अनामी है, दयाल है, जो सत्पुरुष दयाल है, तीनों अवस्थाओं में बराबर रहता है। जाग्रत में, स्वप्न में और सुषुप्ति में वह चैतन्य है। लेकिन मनुष्य चैतन्य नहीं रहता। आम आदमी जब जाग्रत में होता है तो उसको स्वप्न भूल जाते हैं, जब वह स्वप्न में होता है तो उसे जाग्रत का ध्यान नहीं रहता। जब वह आत्मा के क्षेत्र में विचरता है तो उस समय के अनुभव का उसे पता नहीं चलता, सिवाय आनन्द के। हालांकि उस वक्त भी आपकी आत्मा सबकी आत्मा; प्रकाशमय जगत् में होती है और उस समय प्रकाशमय गुरु से भी भेंट होती है, बातें भी होती हैं, सब कुछ होता है, लेकिन वहाँ से उतर करके जब स्वप्न में आ जाते हो तो उस जगत् की बात आपको पता नहीं चलती, क्योंकि उस जगत् में उस समय आप सो रहे थे लेकिन जिसको अनुभव है वह उस वक्त भी जागता है इसलिए वह उस जगत् की बातों को जानता है :—

'दस्तगीरे दो जहाँ और दो जहाँ का है वो पीर।'

उसको इस बात का अनुभव होता है लेकिन यह अनुभव उसके पिछले संस्कारों से और सद्गुरु की कृपा से होता है। मैं आपको यह बता रहा था कि सन्त के संस्कार दुनिया के संस्कारों से कहीं ज्यादा ताकतवर हैं इसलिए उसका व्यवहार तो ऐसे ही लगेगा जैसे आम लोगों का व्यवहार होता है।

सत्संग का मतलब है आपको राधास्वामी हालत पर पहुँचा देना।

इस अवस्था में पहुँचने के बाद में जाग्रत हो, स्वप्न हो, सुषुप्ति हो, तीनों के अन्दर आपको ज्ञान होता है, अनुभव होता है और तीनों का आभास समाप्त होने के बाद व्यक्ति चौथे पद पर पहुँच जाता है। राधास्वामी मत को, सन्तमत को क्यों सबसे ऊँचा माना है? क्योंकि मालिक ने उसे ऊँचा बनाया है। हरएक युग के अन्दर मनुष्य को उठाने के लिए, जगाने के लिए, वापस निजघर ले जाने के लिए अवतार हुए और वे अवतार उस युग के मुताबिक हुए। सतयुग में ध्यान पर ज़ोर दिया गया लेकिन इस ध्यान की विधि के लिए बहुत लम्बा समय चाहिए। कुछ लोग अब भी कहते हैं कि 2½ घण्टे अभ्यास करो। वैसे अभ्यास की जरूरत नहीं, क्योंकि रास्ता सत्संग का है :—

'एक घड़ी आधी घड़ी, आधी से पुनि आध।
कबीर संगत साधु की कटें कोटि अपराध॥'

एक घड़ी, आधी घड़ी का क्या मतलब? 60 पल, या 30 पल, आधी से पुनः आध यानि 15 पल के अन्दर भी कोटि-२ कर्म जो हमको अर्थात् हमारी सुरत को सबसे अलग किये हुए हैं, हट सकते हैं बशर्ते कि साधु अर्थात् सत्पुरुष की संगत मिल जाये। सत्संग का मतलब छैणे बजाना,

जागरण करना, या गाना-बजाना नहीं है। जो जागरण करते हैं वे सो रहे होते हैं। लोग शराब पीकर गाते हैं और श्रोता कहते हैं कि देवी का जागरण हो रहा है। कितना अन्धविश्वास है। जागरण तो वह है जब सब सो रहे हों तब जागो और जब सब जागें तब सो जाओ। आप सब होशियारपुर के रहने वाले हैं। कहते हैं कि होशियारपुर सन्तों की नगरी है लेकिन सन्तों की नगरी में सन्तों के अलावा बाकी सब सोने वाले हैं। वैसे दुनिया की दृष्टि से सब जाग रहे हैं लेकिन नींद में पड़े हुए हैं। जिस मकसद के लिए आये थे उसे भूले हुए हैं। असली जागृति तब आयेगी जब आप अपने असली मकसद की तरफ चलेंगे लेकिन सभी लोग प्रमाद की निद्रा में, लापरवाही की निद्रा में सो रहे हैं। आम लोग कहते हैं कि हम जाग रहे हैं, पर वे चालाकी कर रहे हैं, धोखा दे रहे हैं अरे अपने आपको धोखा दे रहे हैं। यदि गुरु को धोखा दे रहे हो तो अपने आपको धोखा दे रहे हो। बड़ा भारी धोखा दे रहे हो। गुरुमुख से मनमुख होना बहुत खतरनाक है। गुरु को पाना बड़े अच्छे कर्मों का फल है। गुरुमुख से मनमुख होने का मतलब है ऊँची सीढ़ी से नीचे गिरना। इससे बेहतर तो यह है कि आप गुरुमुख बनो ही नहीं, सत्संग में आओ ही नहीं, और अगर सत्संग में आ गये तो फिर सीधे रास्ते पर चलो :--

आ गये सत्संग में, और संग सत का हो गया।
दुर्मति जाती रही और गुरु के मत का हो गया॥

पहले कठिनाई दिखाई देती है लेकिन बाद में गुरु के मत का अर्थात् गुरु जैसा हो जाता है। बिलकुल आसान तरीका है और लोग कठिन रास्ते से जाना चाहते हैं। गुरु के सामने सच बोलना बहुत आसान है। हाँ दुनिया के सामने सच बोलना बहुत कठिन है, क्योंकि

दुनिया में सभी झूठे हैं। जहां सभी झूठे हों वहाँ सच्चे आदमी का काम नहीं लेकिन गुरु के सामने सच बोलना बड़ा आसान है। यदि आपने सच बोल दिया तो आपको कोई कठिनाई नहीं होगी आप चाहे कितना भी बड़ा गुनाह कर दें, गुरु को कत्ल भी कर दें तब भी गुरु आपको माफ कर देगा, यदि गुरु आपको माफ नहीं करे तो वह सत्पुरुष नहीं है। सद्गुरु तो वही है जो आपको यह भेद बता दे कि मैं कैसे मरूंगा। अपराध क्या हैं? और वह कैसे कटते हैं? "कटे कोटि अपराध" अपराध का मतलब है ग़लत काम। ग़लत काम को ही पाप कहते हैं। चोरी करना ग़लत काम है लेकिन व्यापार के अन्दर कौन चोरी नहीं करता? जितने बड़े-२ व्यापारी हैं उतनी ही बड़ी चोरी करते हैं। टाटा, बिरला एक भी पैसा टैक्स का नहीं देते और बेचारा मास्टर जो दो हजार रुपये कमाता है उसे टैक्स देना पड़ता है। ईमानदार आदमी की जगह कहीं नहीं है, जो झूठा है वह इस जमत् में कामयाब रहेगा। किसी को धोखा देना अपराध है लेकिन सबसे बड़ा अपराध क्या है? किसी को मार डालना, कत्ल करना पाप है, अपराध है, ब्रह्महत्या है। ब्रह्महत्या ब्राह्मण की हत्या नहीं है। ब्रह्महत्या, किसी भी जीव की हत्या ब्रह्महत्या है क्योंकि ब्रह्म सभी जीवों के अन्दर मौजूद है। अगर ब्राह्मण भी दुराचारी है, अत्याचारी है तो उसकी भी हत्या करना ब्रह्महत्या नहीं है। तो सबसे बड़ा अपराध क्या है? किसी को कत्ल कर देना। भगवान् श्री कृष्ण ने अर्जुन से कहा "अर्जुन! द्रोणाचार्य को कत्ल कर दे। तो सत्पुरुष के साथ बैठने से गुरु को कत्ल करने का भी अपराध क्षमा हो जायेगा। भगवान् कृष्ण ने अर्जुन को भेद बता दिया "तू अपने सभी अपराधों को, सभी धर्मों को छोड़-कर के केवल मेरे से प्यार कर, मेरी शरण में आजा। मैं

तुम्हें सब पापों से मुक्त कर दूंगा"। लेकिन बात तो यह है कि अर्जुन ने तो सच बोल दिया था "महाराज, मैं कुछ नहीं कर सकता मैं तो घबरा गया।" लेकिन यहाँ घबराने वाले सोचते हैं कि अगर मैं कह दू कि मैं घबरा गया तो मेरी क्या शान रही ? अरे गुरु के सामने तो घबराने की बात कह डालो। गुरु के सामने सच बोलने से तुम्हें कभी हानि नहीं हो सकती है। वहाँ अभयदान होता है। कितनी छोटी सी बात है। अपनी कमजोरी को महसूस करना आधी कमजोरी को दूर करना है। लेकिन कैसे महसूस की जाये ? क्योंकि अहंकार है। कैसे महसूस किया जाये कि जगत् के अन्दर फँसे हुए हैं। आप कहते हैं कि महाराज जी आपने ऐसा कर कर दिया वह तो आपको धोखा दे गया। अरे अपने आपको धोखा दे गया मुझे क्या धोखा दे गया? आप कहते हैं कि महाराज जी आप ऐडमिनिस्ट्रेशन (शासन) नहीं कर सकते लेकिन ऐडमिनिस्ट्रेशन जब हमारी रेडियेशन से होगी तो ठीक होगी। जो बात पहले मुँह से निकलती है वह ठीक होती है मगर दुनिया के लोग नहीं मानते। बिलारी के लोग बड़े भक्त हैं। अभी 1984 की बात है, बिलारी वाले कहने लगे "महाराज जी, स्कूल का उद्घाटन करना है।" मुझे साउथ कोरिया जाना था। मैंने कहा "कोरिया से वापिस आकर उद्घाटन करूंगा।" अब बिलारी वाले बड़ा जोर लगा रहे थे कि "महाराज जी जुलाई में ही उद्घाटन कर दीजिये। मैंने कहा "अच्छा भाई जुलाई में ही रख दो।" हम लोग 21 जुलाई को मैटाडोर से सत्संग के लिए आदमपुर जा रहे थे। मैंने अग्रवाल साहिब से कहा था "हम पौने तीन बजे आयेंगे।" अग्रवाल साहिब बोले "महाराज पौने दो बजे!" मैं चुप हो गया मेरी बात नहीं मानी। मैटाडोर में 8-10 आदमी थे। मैटाडोर का इतनी

बुरी तरह से ऐक्सीडेण्ट हुआ कि वह तो चकनाचूर हो गई। मेरे काफी चोट आई। बात वही हुई कि बिलारी के स्कूल का उद्घाटन कोरिया से लौटने के बाद ही हुआ। अब मैं इसका कोई क्रैडिट नहीं ले रहा। यह कुदरत की बात है। हम ऐसी नहर हैं जिसमें लहर बहती रहती है। पहली बात जो मुँह से निकलती है वह ठीक होती है।

सद्गुरु के आगे सच बोलने से आपको कभी हानि नहीं होगी। अब कृष्ण ने अर्जुन को इतना तक कह दिया तू सभी धर्मों को छोड़कर मेरी शरण में आ जा, मैं तुझे सब पापों से मुक्त कर दूंगा। यह सद्गुरु की संगत का असर है। अर्जुन को कहा "तू कत्ल कर दे"। अब कत्ल करने का अपराध सबसे बड़ा अपराध है। यदि कत्ल का अपराध माफ हो सकता है तो यह बात भी ठीक है :—

'एक घड़ी आधी घड़ी, आधी से पुनि आध।
कबीर संगत साधु की कटें कोटि अपराध॥'

बल्कि मैंने कहा कि एक वाक्यमात्र से भी सद्गुरु आपको ऐसी अवस्था में पहुँचा देता है कि फिर आपको किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं रहती।

मैं आपको बता रहा था कि सन्त अपने संस्कारों के साथ आता है। हरएक आदमी अपने-२ माहौल के अन्दर अपने-२ सस्कारों के साथ आता है। उसके संस्कारों के मुताबिक जैसी उसकी दृष्टि होती है वैसी ही उसकी सृष्टि होती है। अब वसन्त का मौसम है फूल खिले हैं। वसन्त का मौसम बहुत अच्छा मौसम होता है। वसन्त के महीने में सर्दी भी कम और गर्मी भी कम। वसन्त का अर्थ है बस+अन्त अर्थात् वसन्त। सर्दी का अन्त हो गया।

तुम्हारे कर्मों का अन्त तब होगा जब तुम सन्त के पास जाओगे। वसन्त का सुहावना दृश्य तुम बाहर देखते

हो लेकिन सन्त अन्दर देखता है। अन्दर की फुलवारी देखता है। यह अच्छा है कि इस माघ महीने में वसन्त आता है। सूर्य उत्तर की तरफ मकर रेखा पर जाता है। जैसे-जैसे सूर्य उत्तर की तरफ जायेगा वैसे-वैसे ठण्ड कम होती जायेगी और गर्मी आती जायेगी। मकर संक्रान्ति का आपको मैंने सन्देश दिया। आपको मैं बड़ी सद्भावना देता हूँ। जिस मकसद के लिए आपने जन्म लिया है वह पूरा हो जाये। आपका मकसद क्या है ? परम अवस्था। तुम निजधाम से आये हो और वहीं जाना है और उसके लिए मैंने आपको बताया कि हर युग के अन्दर अलग-अलग रीतियाँ थीं। सतयुग के लिए ध्यान था। उस समय लोगों की उम्र बहुत लम्बी होती थी। हजारों वर्षों तक ध्यान लगाने की क्षमता थी। परमतत्त्व अवतार ने उस युग के लिए ध्यान पर जोर दिया। त्रेतायुग में यज्ञ, मन्त्र, कर्मकाण्ड था। गृहस्थ जीवन वेदों के मुताबिक चलता था। वेदमन्त्रों के अनुसार चलने से इस लोक में आनन्द भोगने के बाद परलोक का सुख मिलता था। भगवान् राम का अवतार गृहस्थ का अवतार था। परशुराम का ब्रह्मचर्य का अवतार था। हमारे ऋषियों ने हमारे जीवन को चार भागों में बाँट दिया था। 1) ब्रह्मचर्य, 2) गृहस्थ, 3) वानप्रस्थ, 4) संन्यास। ब्रह्मचर्य जीवन में अध्ययन करना, दुनिया से अलग रहना, शरीर को पुष्ट करना और गुरु से ज्ञान प्राप्त करना। यह गुरु-भक्ति है। सन्तमत कहता है :—

"एक जन्म गुरु भक्ति कर, जन्म दूसरे नाम।
जन्त तीसरे मुक्ति पद, चौथे में निजधाम ॥"

अब इसका मतलब यह नहीं कि चार जन्म लेने पड़ेंगे। सन्तमत कहता है कि इसी जन्म के अन्दर, इसी समय जिस हालत में तुम हो यदि सद्गुरु, सत्संग और सतनाम को

अपना लेते हो तो निजधाम को पहुँच सकते हो। एक जन्म का मतलब है कुछ समय के लिए। कुछ समय के लिए गुरु-भक्ति कर। पहले भक्ति ज़रूरी है। चाहे द्वैत की भक्ति है। भक्ति पर स्वामी जी महाराज ने बहुत लिखा है। गुरु की शारीरिक सेवा हरएक के भाग्य में नहीं आती। वैसे तो यहाँ आना भी शारीरिक सेवा है। सालिगराम जी महाराज ने स्वामी जी महाराज की जितनी शारीरिक सेवा की उसकी कोई मिसाल नहीं। सालिगराम जी महाराज कई मील दूर से स्वामी जी महाराज के लिए नहाने को पानी लाते थे और उनको नहलाते थे, उनका खाना बनाते थे, और यही बात ब्रह्मचर्य आश्रम में थी। शिष्य ऋषियों की सेवा करते थे। सारा दिन सेवा में या गुरु की वाणी सुनने में व्यतीत होता था। शिष्य को अपने खाने-पीने का होश तक नहीं रहता था। एक ऋषिकुमार अपने गुरु से जब बारह साल तक व्याकरण पढ़ता रहा और 12 वर्ष बाद गुरु ने कहा "बस अब तेरा काम हो गया। अब तुझे डिग्री मिल गई। अब तू घर जा सकता है।" शिष्य बड़ा खुश होकर ऋषि-पत्नी के पास खाना खाने के लिए गया। जब उसने पहला ग्रास खाया तो कहने लगा "माता जी क्षमा कीजिये शायद आज आप सब्ज़ी में नमक डालना भूल गई हैं।" ऋषि-पत्नी ने कहा "अच्छा बेटे लगता है कि आज तेरी दीक्षा समाप्त हो गई है। तुझे डिग्री मिल गई है।" ऋषिकुमार ने कहा "माता जी खाने से मेरी डिग्री का क्या सम्बन्ध ?" ऋषि-पत्नी ने कहा "बेटे सम्बन्ध है। मैंने 12 साल तक कभी नमक नहीं डाला, तुझे होश ही नहीं था कि भोजन में नमक नहीं है। आज तुझे होश आ गया कि नमक नहीं है।" यह है गुरु-भक्ति आपका यहाँ बैठना और बैठकर वचन सुनना। वचन कैसे सुने ? कि बाहर का कुछ होश न

रहे। यह गुरु-भक्ति है। क्योंकि भक्ति का मतलब है प्रेम। प्रेम का मतलब है अपने आपको भूल जाना। अपने आपको जब भूल जाओगे तो जिसकी भक्ति कर रहे हो, जिससे प्रेम कर रहे हो, वैसे ही हो जाओगे। यह भक्ति का आसान तरीका है। पहले गुरु की भक्ति करो। महाराज जी ने अपने गुरु की कितनी भक्ति की। महाराज जी आपको बार-बार सुनाते थे "मैंने सोने के ताज, चाँदी के हुक्के, चन्दन के सिंहासन बनवाये। मैं उनके पीछे बावला सा भागता था। मैं उनका पेशाव पी जाता था।" इसका मतलब यह नहीं कि आपको भी ऐसा करना है। यह एक मिसाल है। उनमें कितनी लगन थी। रात-दिन गुरु के पास रहते थे। गुरु के पास एक क्षण बैठ जाओ तुम्हारा धन्य भाग्य है। यदि गुरु ने तुम्हें एक क्षण बैठा लिया इतना काफी है। जब आपको कई घण्टे बिठाये तो उससे कितना लाभ होगा! राधा भगवान् कृष्ण के पास ज्यादा नहीं रही दाता दयाल जी महाराज ने लिखा है कि भगवान् कृष्ण ने राधा के साथ बहुत जुल्म किया। राधा रात-दिन कृष्ण-2 करती रही और इतना कृष्ण-2 किया कि वह स्वयं भी राधा को याद करते थे। भगवान् कृष्ण राधा को याद तो करते थे लेकिन उसको अपने पास नहीं रखा। कहते हैं कि जब राधा मरी तो भगवान् कृष्ण ने अपनी हथेली पर उसका दाह संस्कार किया। कितनी धन्य थी राधा। आप घण्टों यहाँ बैठते हो और सोचते हो कि हमने महाराज जी पर बड़ी कृपा करी :-

'एक जन्म गुरु भक्ति कर, जन्म दूसरे नाम'।

जब तक महाराज जी यहाँ बैठे थे आप उन्हें जान नहीं सके। उनके चले जाने के बाद अब समझते हो कि वह परमतत्त्व थे। हम भले हुए थे। अरे अब भी चेत जाओ। वह कहीं नहीं गये यहीं पर हैं। प्रेम की बात है। अरे प्रेम

से तुम दुनिया को बदल सकते हो, जगत् के मालिक हो। अगर प्रेम इतना है कि आप और सब भूल जाओ केवल गुरु का ही याद रखो तो तुम्हारा जीवन बदल जाये। लेकिन आप और सब बातें तो याद रखते हो और गुरु को भूल जाते हो। अब क्या करें? आपकी मुसीबत कैसे टालें? मुसीबत में याद करना चाहिए, तब भी याद नहीं करते। लेकिन जिनकी श्रद्धा है, विश्वास है वह मुसीबत में गुरु को याद करते हैं। बटाला से एक सज्जन आये हुए हैं उनके विश्वास ने उन्हें बन्दूक की गोलियों से बचा लिया। अब देखो इसके अन्दर कितना प्यार, श्रद्धा और विश्वास है। महाराज जी ने अभी सत्संग में कहा "तुम्हें जो कुछ मिलता है तुम्हारे विश्वास से मिलता है, तुम्हारी श्रद्धा से मिलता है, तुम्हारे कर्म से मिलता है।" लेकिन विश्बास क्या है? यह तो पहले जानो। विश्वास है प्रेम। जितना प्रेम अधिक करोगे तुम्हारा विश्वास भी उतना ही दृढ़ होगा। विश्वास जगत् को बदल सकता है। यह निशानी है, उसका एक नमूना है। श्रद्धा क्या है :—

'भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम्॥

भवानी और शंकर आपके अन्दर मौजूद हैं। भवानी आपकी सुरत है और शंकर आपका शब्द है। उन भवानी और शंकर को नमस्कार है जो भवानी तो श्रद्धा है और शंकर विश्वास है। इन दोनों के बिना सिद्धपुरुष भी अपने अन्दर मालिक का दर्शन नहीं कर सकते। भवानी, शंकर हरएक जगह मौजूद हैं। महाराज जी श्रद्धा-2 कहते हैं। आपने सुन लिया और कह दिया कि गुरु तो कुछ नहीं। श्रद्धा किसके प्रति? श्रद्धा गुरु के प्रति। पहले श्रद्धा होती है फिर विश्वास होता है। श्रद्धा क्या होती है? आपकी

इच्छा होती है कि प्यार किया जाये। फिर जब नज़दीक आते हो तो विश्वास होता है। तुम्हारी श्रद्धा है, तुम्हारा विश्वास है, तुम्हारा कर्म है। यह कर्म पिछला कर्म नहीं है। अरे पिछले कर्मों को तो तुम काट कर आये हो। आपका पिछला कर्म बहुत अच्छा कर्म है। लोग कहते हैं कि हमारे बड़े खोटे कर्म हैं। अरे, खोटे कर्म कैसे? तुमने ऐसे अच्छे कर्म किये हैं जिससे तुम्हें मनुष्य चोला मिला और मनुष्य में आँख, नाक, कान सब बराबर हैं। फिर तुम्हारी मालिक की तरफ आने की इच्छा हुई। करोड़ों में से कितने लोग मालिक की तरफ आने की इच्छा करते हैं? सभी लोग जगत् के अन्दर फँसे हुए हैं। तुम आये भी तो इस सत्य के मन्दिर में आये और परमतत्त्वाधार सत्पुरुष के साथ बैठे। कितने धन्य भाग्य हैं? अब उस धन्य भाग्य को ठुकराना चाहो तो तुम्हारी मर्ज़ी है। श्रद्धा और विश्वास को समझने की बात है :—

'एक जन्म गुरु भक्ति कर, जन्म दूसरे नाम।'

जब तुम भक्ति करोगे, प्यार करोगे तब तुम्हें सद्गुरु नाम देगा। नाम यह नहीं कि 600 आदमियों को खड़ा करके कह दिया कि पंचनाम जपा करो। यह नाम खतरनाक है। नाम क्या है? हरएक व्यक्ति को, हरएक पुरुष को; हरएक स्त्री को, हरएक बच्चे को उसके जैसे संस्कार हैं, उन सस्कारों के मुताबिक सहज में उसके कर्मों को कटाना। फिर उस हालत पर ले आना जो राधास्वामी हालत है। नाम है राधास्वामी हालत। नाम उसको मिलता है जो इस जगत् में रहते हुए घबराता नहीं है :—

'उतते सतगुरु आइया, जाकी बुद्धि मति धीर।
भवसागर के जीव को, खेय लगावे तीर॥'

टेप के सत्संग में आज महाराज जी कह रहे थे कि

कबीर जीव को कैसे तीर लगाते थे ? मैं नहीं जानता । अरे कबीर भी उनके अन्दर है, परमतत्त्वाधार भी उनके अन्दर हैं सब कुछ उनके अन्दर है । सदगुरु वक्त के अन्दर सभी तत्त्व मौजूद होते हैं । तो कैसे लगाते थे पार ? उसकी निशानी है "जाकी बुद्धि मति धीर" जिसकी मति स्थिर है वह पार लग सकता है । क्या आपकी मति स्थिर है ? आपकी मति तब स्थिर होगी जब आप गुरुमुख होंगे । तुम अपने आप में स्थिर नहीं हो इसलिए गुरुमुख होकर के गुरु की कही हुई बात पर चलो ।

जब तुम "मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यम्" पर चलोगे तब तुम्हारी बुद्धि मति धीर होगी । सत्संग में आने का मतलब यही है :—

'आ गये सत संग में और संग सत का हो गया ।'

'जैसी संगत वैसी रंगत' संग सत का हो गया ।' सद्गुरु की आँखों में देखते-देखते-देखते उसका सत् तुम्हारे में आ जायेगा और वह मत् तुम्हारा सत् हो जायेगा । जैसा सद्गुरु है तुम वैसे ही हो जाओगे ।

'दुर्मति जाती रही ।' दुर्मति क्या है ? अपने आपको अलग समझना और गुरु के मत का हो गया, गुरु जैसा हो गया । जिससे तुम प्यार करते हो वैसे ही हो जाओगे :—

'एक जन्म गुरु भक्ति कर, जन्म दूसरे नाम' ।

जब तुम्हें नाम मिल जायेगा और नाम की हालत पर पहुँच जाओगे तब यदि आपके ऊपर दुःख आयेगा तो उस दुःख से आप घबराओगे नहीं । आपकी दृष्टि बदल जायेगी । यह बहुत आसान रास्ता है । पिछले कठिनाई के रास्तों में दुःख है । इसमें आनन्द ही आनन्द है । आपको कुछ करना नहीं पड़ेगा । पूरी तरह से आत्मसमर्पण कर देना है :—

'जाकी बुद्धि मति धीर ।'

उसकी मति स्थिर है। जिसकी मति धीर नहीं है वह कभी राम के मन्दिर में जायेगा; कभी हनुमान के मन्दिर में जायेगा। इससे कुछ हासिल नहीं होगा। हनुमान जी को मैंने भी बचपन में माना है। मैंने ऐसे भी हनुमान के भक्त देखे हैं जो कहते थे कि हनुमान जी मेरे अन्दर आ गये। एक व्यक्ति हमारे साथ रहता था वह कहता था कि हनुमान जी मेरे अन्दर आ जाते हैं! वह हनुमान जी की तरह बड़ा चिंघारने लगा। एक बार मैंने उसे ज़ोर से पकड़ा और नीचे बैठा दिया और कहा बैठ जा हनुमान। उसके होश ठिकाने आ गये। बचपन में हनुमान जी की भक्ति हमने भी की है। मुलतान शहर में चौक बाज़ार में हनुमान का मन्दिर था उधर खास Radiation थी। उधर बहुत लोग जाते थे। मैं भी जाकर मत्था टेका करता था और प्रार्थना करता था कि हनुमान जी अगर मेरा वज़ीफा आ गया तो पाँच पैसे का प्रसाद चढ़ाऊंगा। मेरा वज़ीफा आ गया। लेकिन मेरे मन में असल बात यह थी कि मेरा विश्वास हनुमान जी की मूर्ति से टकरा कर मेरे पास आया और जब मैं सवालों का जवाब दे रहा था तो दे तो मैं अपनी बुद्धि से रहा था लेकिन समझ यह रहा था कि हनुमान जी की शक्ति काम कर रही है। उस समय 8 साल की उम्र में मेरा यह विचार था।

जयपुर में मेरा चचेरा भाई है। महाराज किशन। वह मुझे गुरु मानता है। जोधपुर में पहाड़ी पर बड़ा सुन्दर महान् कालेश्वर का मन्दिर था। शंकर का कोई रूप, रंग नहीं है। वास्तव में शंकर ही सन्तमत का इष्ट है। रविवार के दिन मैं और महाराज किशन महान् कालेश्वर के मन्दिर में जाते और घण्टों तक समाधि ध्यान में बैठते थे। भगवान् जी नाम का एक बालब्रह्मचारी व्यक्ति वहाँ का

पुजारी था। वह कहता था कि मुझे अपने एक हज़ार जन्मों के बारे में पता है। वह पूजन करता था। मैं चार-चार, पाँच-पाँच घण्टे प्रकाश में रहता था। बहुत प्रकाश देखा। शिवरात्रि का दिन था वहाँ और भी बहुत से भक्त थे जो भंग घोट रहे थे। वहाँ पर मुरलीधर नाम का एक भक्त था। जब वह समाधि में बैठता था तो उसके मुँह से अमीरस निकलता था। वह मेरे भाई को कहता था कि आपके भाई साहिब में एक खास बात है। अब मुरलीधर ने भंग घोटी। जब हम समाधि से उठे तो उसने कहा पीओ और मैं दो-तीन गिलास पी गया। हम घर आ गये। महाराज किशन तो कहीं चला गया या सो गया और मैं भाग्य को पढ़ा रहा था। शाम का समय था। इतने में मुरलीधर घबराया हुआ आया। मैंने कहा क्या बात है? कहने लगा मुझे भगवान् जी ने भेजा है कि देखकर आओ कि डाक्टर साहिब ठीक तो हैं। मैंने कहा कि मुझे तो नींद ही नहीं आई। मुरलीधर ने कहा बात यह है कि भंग के अन्दर हमने धतूरा डाल रखा था। अब देखो धतूरे से आदमी पागल भी हो जाता है। लेकिन उसका असर हम पर नहीं हुआ क्योंकि जब मालिक से तार बँधी हुई है तो दुनिया की कोई भी चीज़ नुकसान नहीं पहुँचा सकती है।

तो जैसा गुरु आपको नाम दे या काम दे वैसा ही करो। उस नाम को इतना पकाओ कि हर जगह वही दिखाई दे। तब समझ में आयेगी :—

गुरु तो तेरे पास फकीरा, गुरु तो तेरे पास।
तेरे तन में तेरे मन में, तेरे साँसों साँस ॥
फकीरा गुरु तो तेरे पास ॥

हर साँस में राधास्वामी, हर साँस में गुरु का नाम लेना चाहिए। इस नौजवान के मन में जब नाम था तो

इसको शक्ति से, मालिक की ही शक्ति से इसको कुछ नहीं हुआ। यह मामूली सी बात है :—

'जन्म तीसरे मुक्तिपद, चौथे में निजधाम।'

जब हर समय उसके प्यार में डूबे रहोगे तो वह अवस्था आ जायेगी कि आप जहाँ भी हो, जिस हाल में भी हो, जिस चाल में भी हो वहाँ आनन्द मिलेगा, आपको कहीं भी कोई दुःख नहीं होगा। दुःख तो हम स्वयं पैदा करते हैं। हम मकड़ी की तरह जाला बुनकर उसके अन्दर फँस जाते हैं और वह जाला है सांसारिक सुख का और सांसारिक सुख भी नहीं मिलता। जब आपने गुरु को भुलाया और आपके ऊपर कष्ट आने शुरू हो गये। जब कष्ट आयें तो सोचो कि हमने क्या ग़लती की है ? पता चल जायेगा। थोड़ी देर के लिए भी अविश्वास किया और आपके ऊपर कष्ट आये। क्योंकि इस रास्ते में आ चुके हो। इसलिए अगर आपके ऊपर कष्ट आयें तो सोचो कि आपने कहाँ कोताही की है। ज़रूर मनमुख हुए होंगे। जब गुरुमुख रहोगे तो जीवन्मुक्ति अपने आप मिल जाती है। मुक्ति का मतलब है आज़ादी, हर किस्म की आज़ादी। अब्बल तो दुःख होगा नहीं यदि दुःख आयेगा भी तो तुम्हें महसूस नहीं होगा। तुम्हारी बुद्धि, मति धीर हो जायेगी और आपको हर जगह वही मालिक दिखाई देगा। चश्मे वाहदत हो जायेगी। चश्मे वाहदत के बाद जीवन आनन्दमय बीतेगा। हर क्षण के अन्दर आपको आनन्द ही आनन्द मिलेगा क्योंकि हरएक के अन्दर; हरएक घटना के अन्दर उसी मालिक की झलक दिखाई देगी। लेकिन इस हालत को पाने के बाद भी सद्गुरु का जीवन सहज होता है और वह आगे चलता रहेगा :—

"चश्मे वाहदत भी मिली वाहदत का मंजर देखकर।
कर रहा है रात दिन दुनिया को मंज़िल का सफर।"

आप भी ऐसा ही सफर करोगे जैसा महाराज जी ने किया। आप एकत्व देखने के बाद एकत्व देख रहे हैं पर लोग तो एकत्व नहीं देख रहे हैं। लोगों के एकत्व न देखने के बावजूद अपनी मंज़िल की ओर चलते जाना। क्यों :—

'क्या है दुनिया ख्वाब है, और ख्वाब बीं जाते फकीर।
दामेहिर्सो मालोज़र में, वह नहीं हरगिज़ असीर ।।'

वह जानता है कि दुनिया ख्वाब है, दुनिया स्वप्न है, लेकिन इस स्वप्न में बैठा हुआ भी जागता है और देखने वाला जो ख्वाब बीं है, परमतत्त्व है वह उसके भेद को जान जाता है और उस भेद को जानने की वजह से दुनिया के अन्दर जो लाखों, करोड़ों रुपयों की, सोने-चाँदी की हिर्स होती है, उसको नहीं होती क्योंकि वह जानता है कि यह ख्वाब है। ख्वाब को देखने वाला साक्षी अविनाशी परमतत्त्व का अंश है :—

"तू तो थी सतपुरुष की अंशी।
गोत लजाया शर्म न आई ।।"

जब इसका ज्ञान हो जायेगा तो आप दुःख में भी नहीं घबराओगे। लेकिन आप दुःख आने पर घबरा जाते हो, रोने लग जाते हो। तुम्हें शर्म नहीं आती कि तुम घबराने में फँसते हो, दुनिया में फँसते हो। अरे तुम तो मालिक से प्यार करते हो, मालिक के पास से आये थे और अब तुम अपने स्वत्व को, अपने गौरव को भूल गये हो :—

'ख्वाब बीं ज़ाते फकीर।'

जो ज़ात है, जो असली तत्त्व है, वह ख्वाब को देखने वाला है, वो जाग्रत में भी जागता रहता है, स्वप्न में भी जागता रहता है और सुषुप्ति में भी जागता रहता है। तो इसको जानने के बाद मे "दामेहिर्सो मालोज़र में" पैसे के लालच में, धन के लालच में, सोना-चाँदी के लालच में वह कभी नहीं आ सकता। तो यह है 'जन्म तीसरे मुक्तिपद;

चौथे में निजधाम'। उसके बाद जैसा गुरु चलाये जो उसने आज्ञा दी हो उस पर चलते हुए फिर तुम ऐसी अवस्था पर पहुँच जाओगे जिसे विदेह मुक्ति कहते हैं। इसलिए गुरु के संग से, उसके साथ रहने से, उसके वचन सुनने से आपके सभी कर्म कट जायेंगे। कर्म क्या है ? यहाँ पर आकर बैठना भी कर्म है :—

"कर्म की भट्टी तप की अग्नि, ज्ञान का साबुन लाय।
सतसंग शिला पर मल मल धोवे, चूनर मैल भगाय ।।"
गुरु की संगत से हटेंगे, कर्म माया काल सब।
काट देगा तू सहज में आप ही भव जाल सब ।।

गुरु की संगत से आपके सभी कर्म जो आपको बाँधे हुए हैं, कट जायेंगे, माया काल सब। माया ठगनी है। माया ठगनी को ठगने का तरीका है भक्ति, पराभक्ति। माया को भक्ति के द्वारा ही ठगा जा सकता है। भक्ति व्यवहार की नहीं। असली भक्ति क्या है ? असली भक्ति है गुरु के वाक्य को 'मन्त्रमूलम्' मानना। त्रेतायुग में मन्त्र यज्ञ था। इस युग के अन्दर गुरु के कहे हुए शब्द ही मन्त्र हैं। गुरु के वाक्य को किसी प्रकार भी नहीं टालना। यदि तुमने मन से भी गुरु की आज्ञा को नहीं माना तो आप इस रास्ते पर नहीं चल सकोगे। तुम्हें अच्छे कर्म का फल भी मिलेगा, पैसा भी मिलेगा सब कुछ मिलेगा, लेकिन तुम्हारी अन्दरूनी तरक्की होने में देर हो जायेगी। यदि आप सद्गुरु के ज्यादा नज़दीक हो तो उस समय में सद्गुरु को दुःख दे रहे हो। गुरु को भी ज्यादा मेहनत करनी पड़ेगी क्योंकि सद्गुरु की जिम्मेवारी है। गुरु भी बँध जाता है और आता ही है बँधकर आपकी छुड़ाने के लिए। इसलिए गुरुमुख से मनमुख होने में आपकी तो हानि है ही, लेकिन गुरु बेचारे को भी साथ में घसीटा हुआ है। तो कर्म माया जाल सब। माया है

क्या ? माया है दुनिया की इच्छाएँ। माया को आप सच समझते हो। लेकिन माया है नहीं, दिखाई देती है। हमने खुद अपने ख्याल से माया जाल बना दिया। इच्छाओं को बढ़ाते गये-बढ़ाते गये। आप जितनी इच्छाओं को बढ़ाते जाओगे, जितना आप समझते हो कि ज्ञान इन्द्रियों के सुख को भोगो, जितना ज्यादा ज्ञान इन्द्रियों में पड़ोगे उतनी ही इनकी अग्नि धधकती चली जायेगी। कहीं भी उनकी तृप्ति का ठिकाना नहीं होगा। जब पूरी तरह से किसी चीज़ को तृप्त नहीं कर सकते हो तो उसकी तरफ भागना बिलकुल वैसे ही है जैसे मृगतृष्णा। मृगतृष्णा क्या है? रेगिस्तान के अन्दर प्यासे आदमी को कुछ दूरी पर पानी का दरिया दिखाई देता है लेकिन जैसे-२ वह आगे जाता है वह दरिया दूर ही दूर होता जाता है और आदमी प्यास से मर जाता है। यह मृगतृष्णा है। आप दुनिया के पीछे पड़ते हैं। आप समझते हो कि आपको पत्नी सुख देगी, बेटे सुख देंगे, धन सुख देगा, मित्र सुख देंगे लेकिन यह कोई भी आपको सुख नहीं देगा। अच्छा है आपको धोखा मिले। जब धोखा खाओगे तब होश में आओगे कि यह मेरे नहीं हैं। यह माया-जाल आपका स्वयं का बनाया हुआ है। ये माया-कर्म कैसे कटेंगे ? यह गुरु की संगत से कटेंगे। वो सत्पुरुष जिसे तुमने इष्ट बनाया है यदि वह सत्पुरुष नहीं है तब भी तुम तर जाओगे। अगर सत्पुरुष है, तब तो सोने पर सुहागा है। उसकी संगत से कटेंगे। क्योंकि उसकी संगत से तुम उस जैसे हो जाओगे :—

'आ गये सतसंग में और संग सत का हो गया।
दुर्मति जाती रही और गुरु के मत का हो गया।।'

आप भी गुरु जैसे स्वभाव के हो जाओगे :—

'काट देगा तू सहज में; आप ही भव जाल सब।'

अब यह जो भव का जाल है जो आपने स्वयं बनाया है इसे सहज में ही काट लोगे। सन्तमत की यह सुन्दरता है कि इसमें सत्संग, सद्गुरु और सतनाम तीनों चीजें हैं। सबसे आसान सत्संग है। आप जब सत्संग में आओगे तो आपको सद्गुरु भी मिलेगा जिससे आप सत्संग सुनोगे और वही आपको सतनाम देगा। नाम वह हालत है, वह अवस्था है जहाँ पहुँचने के बाद में आपको दुनिया के उतार-चढ़ाव होते हुए भी कष्ट नहीं होगा। जब सत्संग में आओगे तो सहज में ही भव के जाल से छूट जाओगे। सहज का मतलब है जहाँ आपको कुछ भी कोशिश नहीं करनी पड़े, जो चीज अपने आप हो जाये और आपको कुछ न करना पड़े। न तो हमें पूजा करने की ज़रूरत है, न घण्टियाँ बजाने की, न ब्राह्मण को बुलाकर ग्रह टलवाने की ज़रूरत है सिर्फ सत्संग में आने की ज़रूरत है। जो काम सहज में बिना किसी कोशिश के अपने आप हो जाये इससे सस्ती चीज़ आपको और कहाँ मिलेगी? लेकिन बात यह है कि जब सस्ती चीज़ मिल जाती है तो शक हो जाता है कि असली है या नहीं, सच्ची है या झूठी। किसी को भेड़ सस्ती मिल गई वह बार-बार देख रहा था कि कुत्ता तो नहीं है। जब सस्ती चीज़ मिल जाती है तो लोगों को उसकी क़दर नहीं होती है। जहाँ गुरु महाराज के दर्शन टैलीविज़न पर ही होते हैं, लाखों लोगों की भीड़ होती है, आपको पैसे देने पड़ते हैं वहाँ आपको अच्छा लगता है। जिधर तुम्हें आनन्द है, आराम है, कोई तकलीफ नहीं होती वह अच्छी लगती है। यहाँ पर बिना तकलीफ के उस अवस्था को पहुँच जाओगे जिस पर पहुँचने के बाद तुम्हारी दुनिया के जितने दुःख हैं वह दुःख नहीं रहेंगे। तो सहज में ही आपके बनाये हुए भव के जाल कट जायेंगे। भव का जाल मनुष्य कैसे

बनाता है ?

एक औरत थी वह सबेरे से ही घर में सबके साथ लड़ाई करती थी। जब तक वह गुस्सा न करे उसकी रोटी हजम नहीं होती थी। एक दिन वह उठी और अपने पति को कान पकड़ कर उठाया उठो जी, उठो जी। पति बेचारा चुप रहा। लड़ाई का कोई कारण नहीं मिला। फिर अपने पुत्र के साथ भी ऐसा ही किया वह भी चुप रहा। फिर बहू और बेटी के साथ भी ऐसा ही किया मगर वह भी चुप रहीं। जब उसे गुस्से का कारण नहीं मिला तो वह नहर के पुल पर जाकर खड़ी हो गई और पानी में एक पत्थर दे मारा। पानी से आवाज़ आई डुबुक। वह औरत गुस्से में बोली तू डुबुक, तेरा बाप डुबुक, तेरा खसम डुबुक मैं क्यों डुबुक ? उधर से एक शरीफ आदमी जा रहा था, कहने लगा; माई किसके साथ लड़ रही है ? कहने लगी तेरे साथ लड़ूंगी। अब लड़ाई का कोई कारण नहीं होता मनुष्य अपने आप ही भव का जाल बनाता है :—

'गुरु की संगत से कटेंगे, सहज माया जाल सब।'

सच्चा सौदा, सस्ता सौदा।
झूठा सौदा, महंगा सौदा॥
सच्चा सौदा, आसान सौदा।
झूठा सौदा, मुश्किल सौदा॥

यह सस्ता और सच्चा सौदा है :—

मुख्य साधन संग सत का, और शेष हैं समझ गौण।
इससे सूझेगी परमगति, सद्गति को चाल सब॥

यह इतना आसान तरीका है कि सत की संगत से आपके सब काम बन जायेंगे। पहले ज़माने में जितने साधन थे, चाहे वह ध्यान का था, चाहे वह यज्ञ का था, चाहे पूजा-

पाठ का था उन सब में सन्तमत का साधन सबसे आसान है। सन्तमत कहता है कि ध्यान करो। किसका? जीते-जागते गुरु का। यदि पत्थर की मूर्ति का ध्यान करते-२ मीरा इतनी ऊँची चढ़ी कि शरीर को भी साथ ले गई तो इससे ज्यादा क्या हो सकता है? मीरा ने पत्थर की मूर्ति को पूजा का एक लक्ष्य मानकर, प्यार करके, उसको परम-तत्त्व मानकर मालिक को प्रकट कर लिया तो जीते-जागते गुरु से जो बातचीत करे, जो आपके दुःखों को सुनकर के आपको जवाब दे, क्या नहीं हो सकता? जो गुरु आपको जवाब नहीं दे सकता वह भी निःकृष्ट है। सद्गुरु वक्त वही है जो आपके सभी सवालों का जवाब दे आपकी सभी समस्याओं का हल निकाले। आप अपनी समस्याएँ उसके सामने पेश तो करो। जो आपकी शंकाओं का समाधान नहीं करे वह सन्त तो हो सकता है लेकिन सद्गुरु वक्त नहीं हो सकता है। तो उस जीते-जागते चैतन्य जिससे बातचीत कर सकते हो, जो जवाब दे सकता है, जो आपके हर संकट को दूर करने का रास्ता बता सकता है उसकी मूर्ति का ध्यान करो। खासकर उस गुरु का ध्यान करो जिसने अपनी कमाई का साधन नहीं बनाया हुआ है या तो वह सिर्फ गुरु की आज्ञा का पालन कर रहा है या वह कर्त्तव्य मानकर या अपनी duty मानकर कार्य कर रहा है। उसको प्यार हो जाता है उसकी काम की शक्ति इतनी प्रबल हो जाती है कि सारे विश्व से उसका प्रेम हो जाता है। उसका प्यार निःस्वार्थ प्यार होता है। यह उसकी निशानी है। जो निःस्वार्थ है, जिसे वीतराग पुरुष कहते हैं उसकी मूर्ति का ध्यान करने से आपको हर हालत में फायदा पहुँचेगा। नहीं तो वह वीतराग पुरुष नहीं है। इसलिए :-

'ध्यान मूलं गुरोर्मूर्तिः'।

तो सत्पुरुष की मूर्ति पर, वीतराग पुरुष की मूर्ति पर ध्यान करने से आपको ध्यान भी आ गया और 'मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यम्' मन्त्र भी आ गया। तुम्हें किसी और किताब के पढ़ने की जरूरत नहीं है। मैं भगवद्गीता की बात करता हूँ। भगवान् कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया। महाराज जी ने कहा कि अर्जुन भगवान् कृष्ण के मुख से गीता का उपदेश सुनने के बाद भी नरक में गया। क्यों गया? मैंने कहा— महाराज जी! इसमें कोई ग़लत बात नहीं है। इसका मतलब यह नहीं कि भगवान् कृष्ण सत्पुरुष नहीं थे। हरएक आदमी जब मरता है तो उसके इस शरीर में से सूक्ष्म शरीर निकल कर जाता है, जो प्राणमय कोष का शरीर होता है। आजकल उस सूक्ष्म शरीर की फोटो भी ली जाती है। उस सूक्ष्म शरीर के अन्दर हड्डी, मांस कुछ नहीं होता। लेकिन वह चलता भी है, देखता भी है, सुनता भी है मगर चख नहीं सकता। आम आदमी को यह पता नहीं चलता कि मैं मर गया हूँ। इस पृथ्वी का भी प्राणमय कोश है। प्राणमय कोष पृथ्वी का क्या है? वह वातावरण है, उसे वायुमण्डल भी कहते हैं। यह प्राणमय कोश है। इसके अन्दर भी पृथ्वी की शक्ल है जो दिखाई नहीं देती लेकिन वैसी की वैसी ही है। तो मृतक व्यक्ति पृथ्वी के वातावरण में तीन दिन तक रहता है। तीन दिन रहने पर आमतौर पर उसकी सब इच्छाएँ समाप्त हो जाती हैं। तब वह प्राणमय शरीर को छोड़कर मनोमय कोश में जाता है। वहाँ उसका मानसिक कोश है। वहाँ पर सब चीज़ें मन की बनी हुई हैं जैसे स्वप्न में होती हैं। लेकिन वह साकार स्वप्न होता है। अगर मृतक व्यक्ति हिन्दु है और वह मन्दिर में जाता है तो उसे वहाँ मन्दिर मिल जायेगा। यदि सिक्ख है तो उसे गुरुद्वारा

मिलेगा, यदि मुसलमान है तो उसे मस्जिद मिलेगी लेकिन यह मनोमय कोष है। वहाँ आपस में लड़ते-झगड़ते नहीं हैं। इस मनोमय कोष में उसे होश आता है कि मैंने दुनिया के अन्दर बड़ा अन्याय किया। मालिक को याद नहीं किया, सद्गुरु नहीं बनाया। यदि मृतक जल्दी वापस आ जाये और सद्गुरु बनाकर वापस चला जाये फिर तो ठीक है वरना ऊपर के मण्डलों में चला जाता है लेकिन उसे निजघर पहुँचने में देर लगती है। अब मृतक मनोमय कोष से निकल कर प्रकाशमय विज्ञानमय कोष में जाता है। यह बात ठीक है कि प्रत्येक आदमी को प्राणमय कोष में तीन दिन रहना पड़ता है। इस प्राणमय कोष में सन्त नहीं ठहरता। महाराज जी ने कहा कि युधिष्ठिर को भी आधा घण्टा ठहरना पड़ा। मैंने कहा महाराज जी, उसकी अच्छी किस्मत थी लोग तो तीन दिन ठहरते हैं वह तो आधा घण्टा ही ठहरा। नरक क्या है? प्राणमय कोष में रहना ही नरक है। प्राणमयकोष में रहने वाला अगर शराब पीता है तो वह ऊपर तो जायेगा नहीं लेकिन वह होटल में भी जायेगा, शराब के ठेके में भी जायेगा, लोगों को खाते-पीते देखेगा। उसका भी मन करेगा लेकिन खा-पी नहीं सकता है। यही तो नरक है। ऐसा व्यक्ति जिसने लोगों को ज्यादा दुःख दिवा है, जिसके नफरत के कर्म ज्यादा हैं, प्यार के कर्म कम हैं उसे यहाँ पर तीन दिन या तीन साल या तीन सौ साल तक भी रहना पड़ेगा। मैंने कहा महाराज जी, उस नरक में युधिष्ठिर को कुछ मिनट रहना पड़ा। यह तो अच्छा है। महाराज जी आपको मिसाल देने के लिए कहते थे कि गीता पढ़ने से भी कुछ नहीं होता। गीता के समझने के लिए भी गुरु होना चाहिए।

वास्तव में तो हम सभी परमतत्त्व हैं लेकिन उस परमतत्त्व को जगाने के लिए सत्संग की जरूरत है। सत्संग

में आने से आपको सभी बातों का ज्ञान प्राप्त हो जायेगा :--

मुख्य साधन संग सत का,
और शेष है समझ गौण।

पिछले ज़माने में जितने साधन थे सब में मेहनत करनी पड़ती थी। पूजा करने में भी मेहनत है। लेकिन यहाँ पर आपको पूजा क्या करनी है ? यहाँ पर न तो पूजा की सामग्री मंगानी है, न पण्डित जी को बुलाकर तिलक लगाना है, न उनको माला पहनानी है, न पैसे देने हैं। यहाँ पर पूजा का मतलब है :—

'पूजामूलं गुरोः पदम्'।

जीते-जागते गुरु को नमस्कार करना है। उसके पाँव में सिर रखना है। क्यों ? उसके सामने सिर झुकाने का मतलब है आपका अहंकार समाप्त होना। आपका अहंकार गया नहीं और मालिक आपके अन्दर आया नहीं। पूजा का यह आसान तरीका है :—

"जिसने पाया पाया सत संग, से भक्ति ज्ञान गम।
तू उतारेगा विवेक और तर्कना की खाल सब॥"

अब जितने साधन बताये हैं, सब कठिन हैं जैसे कर्म-काण्ड है, ज्ञान है। ज्ञान का क्या मतलब ? कि सच्चाई को अपने अन्तस् में देख लेना। जिस सच्चाई के लिए बड़े-२ विद्वान् तर्क करते हैं, बाल की खाल उतारते रहते हैं। धर्म; कर्म, विज्ञान, तत्त्व, अतत्त्व क्या है ? आपको यह सब जानने की ज़रूरत नहीं। यह सब कुछ उस सत्पुरुष के अन्दर मौजूद है। उसकी संगत में बैठने से आपको सब ज्ञान हो जायेगा। महाराज जी ने कुछ नहीं पढ़ा था। महाराज जी जो-२ बातें ज्ञान की कहते थे और जब मैं कहता था कि यह तो वेदों में है यह उपनिषद् में है तो कहते थे कि भई मुझे मालूम नहीं। इसका मतलब है कि मैं ठीक हू :—

"कर्म धर्म वैराग्य ज्ञान तत्, विज्ञानी पूरा सच्चा।
हे दयाल करो दृष्टि दया की, हृदय दुःखी हमारा है ॥
अब तो शरण में आन पड़ा हूँ, एक आस तेरी मुझको।
राधास्वामी चरन से प्रीत रहे, नित वही धुर इष्ट सहारा है ॥

मुझे एक आदमी की चिट्ठी आई है उसने लिखा महाराज जी! मैंने बड़ी किताबें पढ़ी हैं, बड़े धर्मग्रन्थ पढ़े हैं कल्याण पढ़ता हूँ, भगवद्गीता पढ़ी है इसलिए आप मुझे अपना मानव मन्दिर भी भेजा करें। इसने मानव मन्दिर कहीं पढ़ा होगा। जो एक दफा मानव मन्दिर पढ़ लेता है वह कहता है कि हमने ऐसा ज्ञान कहीं नहीं पढ़ा।

धर्म कई किस्म के हैं। वैसे धर्म तो एक है। कुछ लोग धर्मशाला बनवाते हैं, हस्पताल बनाते हैं लेकिन इन सब चीजों से परमतत्त्व की प्राप्ति नहीं होगी। हाँ, आपको अच्छा जन्म मिल जायेगा। वैसे हस्पताल की जगह अगर बच्चों का स्कूल खोल दिया जाये और उसमें सन्तमत की शिक्षा दी जाये तो बात दूसरी है। इसलिए महाराज जी ने कहा कि हस्पताल बन्द कर दो। इसका मतलब यह नहीं कि आप हस्पताल न जायें। यदि ज़रूरत पड़े तो जाना चाहिए। यदि आप सद्गुरु के पास बैठे हैं, सत्संग में आये हैं और आपका ध्यान लगता है तो आपको बीमारी होगी नहीं। लोग कहते हैं जहाँ सबसे बड़ा डेरा हो, सबसे बड़ा हस्पताल हो वही हमें परमतत्त्व तक ले जायेगा। मगर यह बात ग़लत है। हस्पताल, धर्मशाला बनाने को लोग धर्म समझते हैं। लेकिन यह एक अच्छा कर्म है। इस कर्म से तुम अगले जन्म में एक बड़े सेठ बन जाओगे लेकिन तुम्हें जन्म तो लेना पड़ेगा इसलिए :—

"कर्म धर्म वैराग्य ज्ञान तत"।

अच्छे कर्म, या कर्मकाण्ड कराना, बड़े-२ यज्ञ कराना

प्रभावशाली होता है। मैं जानता हूँ कि उदयपुर के अन्दर एक ब्राह्मण है। वह बहुत कर्मकाण्डी है। उदयपुर में एक बड़ी भारी झील है। एक बार वह झील बिलकुल सूख गई। मछलियाँ मर गईं तो उसने यज्ञ कराया और यज्ञ भी ऐसी विधि से कराया कि यज्ञ कराने के दो-तीन दिन बाद इतनी वर्षा हुई कि वह झील पानी से भर गई और आज तक उसका पानी नहीं सूखा। यह कर्मकाण्ड है। यदि कर्मकाण्डी है तो कर सकता है। कर्म के लिए कर्मकाण्ड की ज़रूरत नहीं, वैराग्य के लिए जंगल में जाने की ज़रूरत नहीं। अगर आपको पढ़ने के बाद ज्ञान आ गया, तो ज्ञान तो काट-छाँट करता है लेकिन आखिर में कहता है कि मालिक है। इन सब बातों की आपको ज़रूरत नहीं। मैं समझता हूँ कि जो इस सांसारिक ज्ञान में जाता है वह फँस जाता है। सांसारिक ज्ञान में काट-छाँट है, भेद-भाव है। इसलिए कहते हैं कि सन्त एडमिनिस्ट्रेशन नहीं कर सकता। लेकिन सन्त के पास बैठने वाला अगर एडमिनिस्ट्रेशन करेगा तो बड़ा सफल होगा। सन्त के परामर्श से एडमिनिस्ट्रेशन अच्छा चल सकता है अगर वह गुरुमुख रहे मनमुख न हो तब। लेकिन असली बात यह है कि मनमुख नहीं होना चाहिए। 'धर्म, कर्म वैराग्य ज्ञान तत'। यह तत्त्व की बातें आपको जानने की ज़रूरत नहीं है। आप केवल सद्गुरु के साथ प्रेम करो, प्यार करो चाहे भाई मानकर करो, चाहे पिता मानकर करो, चाहे पुत्र मानकर करो, चाहे उसे शत्रु मानकर करो लेकिन गुरु से सम्बन्ध रखो। चाहे गुरु को गालियाँ ही देते रहो, ठोकर ही मारते रहो मगर उसके साथ सम्बन्ध रखो। गाली भी तो लंगोटिये ही देते हैं। मुझे एक कहानी याद आ गई। राम सिंह नाम का एक आदमी था। उसे ज्ञानसिंह ने खाने पर बुलाया था। राम सिंह घर से चला तो रास्ते

में लक्ष्मण सिंह नाम का आदमी मिल गया। लक्ष्मण सिंह कहने लगा "राम सिंह जी किधर चले हो ?" राम सिंह ने कहा "ज्ञान सिंह ने मझं आज खाने पर बुलाया है" लक्ष्मण सिंह ने कहा "मैं भी तुम्हारे साथ चलूंगा"। राम सिंह ने कहा "तू कैसे जायेगा ?" लक्ष्मण सिंह ने कहा "मैं तुम्हारी तुफैल चलूंगा।" राम सिंह ने कहा "अच्छा भई तुफैल ही सही" अब दोनों आगे गये तो रास्ते में लहना सिंह मिल गये। लहना सिंह ने कहा 'राम सिंह, लक्ष्मण सिंह तुम दोनों आज किधर जा रहे हो ?" राम सिंह ने कहा कि आज ज्ञान सिंह ने दावत पर बुलाया है" लहना सिंह ने कहा "लक्ष्मण सिंह किधर ?" राम सिंह ने कहा "यह मेरी तुफैल जा रहा है" लहना सिंह ने कहा "मैं भी चलूंगा।" राम सिंह ने कहा "तू कैसे ?" लहना सिंह ने कहा "मैं तुफैल की तुफैल चलूंगा" राम सिंह ने कहा अच्छा भई ! तू तुफैल की तुफैल चल"। अब तीनों आगे गये। रास्ते में अमर सिंह मिल गया। अमर सिंह ने कहा "अरे तुम तीनों किधर जा रहे हो" राम सिंह ने कहा "ज्ञान सिंह के यहाँ आज दावत है" अमर सिंह ने कहा "लक्ष्मण सिंह कैसे ? राम सिंह ने कहा "यह मेरी तुफैल जा रहा है।" अमर सिंह ने फिर कहा "लहना सिंह कैसे ?" राम सिंह ने कहा "यह तुफैल की तुफैल जा रहा है।" अमर सिंह ने कहा मैं भी चलूंगा।" राम सिंह ने कहा "तू कैसे ?" अमर सिंह बोला "फिक्र मत करो, ज्ञान सिंह के यहां ही तो जा रहे हो अरे ! वह तो मेरा लंगोटिया है।" राम सिंह ने कहा "अच्छा भई तू लंगोटिया ही बनकर चल" अब चारों ज्ञान सिंह के यहाँ पहुँचे। ज्ञान सिंह ने देखा कि एक बुलाया और चार आये। उसे बड़ा गुस्सा आया। ज्ञान सिंह ने पूछा "राम सिंह जी ये तीन किस तरह आये ?" राम सिंह

ने कहा "ये लक्ष्मण सिंह हैं और मेरी तुफैल आये हैं, यह लहना सिंह है। ये तुफैल की तुफैल आये हैं" अब ज्ञान सिंह को और भी गुस्सा लगा उसने कहा "यह साला उल्लू का पठ्ठा, गधे का बच्चा चौथा क्यों आया है? अमर सिंह ने कहा "देखा! मैं कहता था न कि ज्ञान सिंह मेरा लंगोटिया है।" तो जो लंगोटिये होते हैं वे एक दूसरे को गाली भी देते हैं।

इसलिए आपको किसी ज्ञान, विज्ञान की जरूरत नहीं है। आप गुरु के लंगोटिये बनकर ही गाली निकालो गुरु आपको तब भी ले जायेगा। "विज्ञानी पूरा सच्चा" सतगुरु विज्ञानी होता है जो इस जगत् के भेद को जानता है। मेहरमेराज (परमदयाल) होता है। वह आपको हर किस्म का भेद बता देता है। गृहस्थ का भी भेद बता देता है और परलोक का भी भेद बता देता है। व्यापार में चालाकी का भी भेद बतायेगा लेकिन आपको ऐसा विज्ञान बतायेगा जिस पर चलने से तुम्हें कभी हानि नहीं पहुँच सकती। ऐसे गुरु की शरण में आने से आपके सभी काम बन जायेंगे :—

'अब तो शरण में आन पड़ा हूँ,
एक आस तेरी मुझको।'

जिस पर तुम आस रखते हो, सब कुछ उस पर छोड़ दो, न्यौछावर कर दो। अगर नहीं छोड़ते तो उसी के साथ चिपके रहो। ये प्रेम, भक्ति सद्भावना एक दिन का काम नहीं है। यह पार्टटाईम जौब नहीं है कि चार घण्टे काम करने पर आपको आधी तनख्वाह मिल जायेगी। यहाँ तो 24 घण्टे उसी की रट और उसी का ध्यान। तब सब काम बनेंगे :—

'कुछ दिनों संगत हो कुछ दिन, नाम कुछ दिन मुक्त गति।
इसके पीछे पद है सत का, सत की रीति पाल सब॥

कुछ दिन गुरु की संगत हो। नारायण दास जी बड़े प्रेम से मेरी मालिश करते हैं। मेरी समाधि लग जाती है। चूंकि मैं समझता हूँ कि यह शरीर आपके लिए है इसलिए मुझे आनन्द आता है। कुछ दिन भक्ति हो। अब मैं समझता हूँ कि लोगों की क्यों इच्छा होती है कि हम खाना बनाकर महाराज जी के लिए ले जायें। यह आपका प्रेम है। आप चाहते हैं कि महाराज जी को अच्छा भोजन मिले, महाराज जी का स्वास्थ्य अच्छा रहे। छोटे-२ बच्चों को ध्यान रहता है। 8-8 साल की बच्चियाँ मुझे खत लिखती हैं कि आप अपने शरीर का ध्यान रखें। यह बड़ी भारी सेवा होती है। तो कुछ दिन भक्ति हो, कुछ दिन सेवा हो और उसके बाद है नाम। नाम की भी भक्ति है। हर वक्त उसका नाम लेना। जब भक्ति हो गई अर्थात् शारीरिक सेवा हो गई आपका यहाँ आना भी शारीरिक सेवा है। आप यहाँ बैठे हैं। शरीर का कष्ट उठा रहे हैं। तो यह भी शारीरिक सेवा है। शरीर के बाद मन है। मन की सेवा है नाम। गुरु की सेवा करना भी नाम है। हर समय उसी की बात करना। मैं देखता हूँ कि कुछ लोग हर समय गुरु की ही बात करते रहते हैं। इससे उनको मन की शक्ति मिल जाती है। गुरुमुख दूसरों के लिए गुरु से भी बड़ा होता है। तो कुछ दिन नाम। कुछ दिन का मतलब है कि नाम में लगातार इतना मस्त रहना कि आपको सुध न रहे। गुरु का रूप तथा नाम आपके साथ है। आपकी रक्षा अपने आप होगी। आपका कोई काम कभी नहीं रुक सकता है। जब आप लगातार इस ध्यान में रहेंगे कि वो मेरे साथ है तो आपके सभी काम हो जायेंगे। इसके कुछ दिन बाद मुक्तिपद आता है। फिर आप उस अवस्था में आ जायेंगे जहाँ आपको हर जगह मालिक दिखाई देगा। अब हर जगह मालिक को देखने का मतलब है कि

आपका चाहे महाराज जी से प्रेम हो चाहे मेरे से प्रेम हो चाहे चरण सिंह जी से प्रेम हो मगर प्रेम में अनार नहीं होगा। सभी केसाथ एक सा ही प्रेम होगा। सभी में मालिक दिखाई देगा। यह सब उस हालत में पहुँचने के बाद पता लगता है। आम लोग उस हालत पर न पहुंचने की वजह से अलग-अलग हैं। पहले तो एक से अर्थात् एक रूप से प्रेम करना ज़रूरी है। जब उसे रूप के अन्दर का परमतत्त्व आपके अन्दर आ जायेगा तब वह सब जगह दिखाई देगा। फिर क्या होगा? कि अगर आप मन्दिर जाओगे तो मन्दिर में भी आपको परम-तत्त्व दिखाई देगा। असल बात यही है कि वो सभी गुण धार में आते हैं जब एक गुरु दूसरे गुरु को धारा में दे जाता है। आपके अन्दर भी वह सारे गुण मौजूद है। यह एक राज़ की बात है इसको मेहरमेराज़ (परमदयाल) जान सकता है कि उसमें सब गुण मौजूद हैं। तो उसी की भक्ति करने से आपकी भक्ति ऐसी हो जायेगी कि आपके अन्दर चश्मे-वाहदत आ जायेगी। मैंने खुद देखा कि महाराज जी एक जैन के घर गये तो उसने स्वामी महावीर जी की आरती करनी शुरू की। महाराज जी भी हाथ जोड़ कर खड़े हो गये लेकिन महाराज जी दाता दयाल का ध्यान कर रहे थे क्योंकि दाता दयाल जब पूर्ण हैं तो हरएक के अन्दर मौजूद हैं। इसलिए किसी से द्वेष नहीं। राधास्वामी मत किसी का खण्डन नहीं करता। खण्डन वह नहीं करेगा जिसको राधा-स्वामी का अनुभव हो गया है। जिसको अनुभव नहीं हुआ है वह कहेगा कि मैं व्यास वाला हूँ, मैं आगरे वाला हूँ, मैं पन्नी गली का हूँ, मैं दयाल बाग का हूँ। यह बिलकुल ग़लत है, यह तो कालमत हो गया। वास्तव में कुछ दिन के बाद आपकी ऐसी अवस्था आ जायेगी अर्थात् सतपद पर पहुँचने के बाद आपको फिर किसी लीज़ की ज़रूरत नहीं रहेगी :—

'अर्थ धर्म और काम मुक्ति, की है कुंजी सत का संग।'

सत् की संगत' सद्गुरु के साथ रहना या सद्गुरु से बातचीत करना या सद्गुरु से अपने बारे में अपनी चीजें मांगना ठीक है और सद्गुरु वही है जो यह नहीं कहे कि तुम अपने घरबार को छोड़कर 24 घण्टे मेरे पास रहो या 2½ घण्टे नाम जपो। सद्गुरु आपको अर्थ देता है। महाराज जी आपको कहते थे कि पहले कमाओ। सद्गुरु आपको धन प्राप्त करने का तरीका बतायेगा जिससे आपकी कामनाओं की तृप्ति हो। आपकी कामनाओं की ऐसी तृप्ति कराता चला जाता है जिससे सत्संगी का भी नुकसान नहीं हो। नारायण दास जी जो सद्गुरु का काम कराता है वह दुनियावी नहीं होता, उसके अन्दर राज होता है। फर्क यह है कि वह जो काम करायेगा उससे आपको कोई नुकसान नहीं होगा। इसलिए वह हर किस्म का प्रसाद देता है :—

'साईं के दरबार में कमी काहु की नाहिं।
बन्दा मौज न पावहीं चूक चाकरी माहिं॥

कौन सी चीज़ है जो तुम्हें नहीं मिलेगी। अर्थ मिलेगा, धर्म अपने आप हो जायेगा, सबके साथ प्रेम हो जायेगा, दूसरों की सेवा हो जायेगी और मोक्ष भी मिल जायेगा। ये चारों चीजें मिलती हैं :—

'राधास्वामी संग कर दे काट अब जंजाल सब'।
राधा आदि सुरत का नाम, स्वामी आदि शब्द पहचान।

राधा लोक है स्वामी परलोक है लोक और परलोक यहाँ पर दोनों बनते हैं। राधास्वामी रास्ता है, राधास्वामी नाम है, राधास्वामी अवस्था है। आज आपको इतना कह दिया। इन्हीं शब्दों के साथ मैं आपको सद्भावना देता हूँ और आशीर्वाद देता हूँ। सभी को राधास्वामी!

आपका फकीरमय
मानव

मासिक सन्देश

परमसन्त हजूर साहब दयाल

डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज

मेरे परम प्रिय सत्संगियो !

राधास्वामी, परम दयाल जी सहाई !

मैंने पिछले मासिक सन्देश में आपको नये वर्ष की सद्भावना पहले ही भेज दी थी। हालांकि उस सन्देश के लिखते समय मुझे यह ज्ञान नहीं था कि मैं स्वयं नये साल के दिन कहाँ पर होऊंगा। जैसे कि मैंने उसी सन्देश में इशारा दिया था कि मैं 25 दिसम्बर 1986 को विशेष कार्य के लिए अमेरिका के लिए रवाना होकर 7 जनवरी 1987 को वापिस भारत पहुंच जाऊँगा, वैसा ही हुआ। इस विदेशी दौरे की घटनाओं के बारे में आपको कुछ बताने के लिए मैं नीचे व्याख्या दे रहा हूँ। मुझे पूरी आशा है कि आपको यह व्याख्या बहुत दिलचस्प लगेगी और उसमें आपको अपनी रूहानी जिन्दगी के अनुभव के लिए प्रेरणा मिलेगी।

25 दिसम्बर बृहस्पतिवार प्रातःकाल 3 बजकर 15 मिनट पर मैं थाई एयर लाइन की उड़ान से देहली हवाई अड्डे से रवाना होकर उसी दिन प्रातःकाल 8 बजे लन्दन पहुँचा। वहाँ पर हवाई अड्डे के अन्दर ही 6 घण्टे की

प्रतीक्षा करने के बाद दोपहर के दो बजे T.W.A. की उड़ान से रवाना होकर सायंकाल 4 बजे पहुँच गया। वहाँ पर करीब एक घण्टा कस्टम और सुरक्षा विभाग से फारिग होने में लगा। मैं 6 बजकर 40 मिनट पर T.W.A. की उड़ान 305 से रवाना होकर 9 बजकर 15 मिनट सायं फ्लोरिडा के सबसे सुन्दर टैम्पा हवाई अड्डे पर पहुँच गया। वहाँ पर श्री बॉब मैकीवन और श्रीमती रुथ बुश के सुपुत्र श्री डैविड बुश मुझे लेने के लिए आये हुए थे। श्री बॉब से वार्तालाप करने के पश्चात् और उन्हें मिलने के लिए दूसरे दिन प्रात:काल मिलने का समय देने के बाद डैविड के साथ श्रीमती रुथ बुश की नई ब्यूक कार से उनके निवास स्थान पर पहुँचा। क्योंकि मैं श्रीमती रुथ बुश की मानसिक चिकित्सा के लिए वहाँ गया था। इसलिए सबसे पहले मैंने उनसे बातचीत की। श्रीमती रुथ बुश के बड़े सुपुत्र श्री रिचर्ड बुश फ्लोरिडा राज्य की राजधानी में एक विख्यात वकील हैं। डैविड गैन्सविल नगर में विश्वविद्यालय का छात्र है। इन दोनों ने मुझे दिसम्बर के दूसरे सप्ताह में फ्लोरिडा से कई टेलोफोन किये और कहा कि मेरा क्लीयरवाटर फ्लोरिडा में उनकी माता श्रीमती रुथ बुश के मानसिक सन्तुलन के लिए तुरन्त आना ज़रूरी था। वास्तव में श्रीमती रुथ बुश की समस्या मानसिक नहीं थी। मैंने पहिले भी आपको बताया है कि यह महिला बहुत ही सच्ची और दयालु है। कई बार इन्होंने परमदयाल जी के आगमन पर और मेरे क्लीयरवाटर जाने पर बहुत खर्च किया है। इनके मन में मानवता धर्म को फैलाने के लिए अधिक सहयोग देने की प्रबल इच्छा है। वह यह चाहती है कि क्लीयरवाटर में मानवता मन्दिर स्थापित हो जाये।

उनकी यह इच्छा नई नहीं है बल्कि बहुत वर्ष पुरानी

है। मैंने उनसे पहले भी कहा था कि जब तक उन्हें उनकी सम्पत्ति के व्यापार में काफी लाभ न मिले तब तक वह मानवता मन्दिर को अपना पेट काटकर सहायता न दें। पिछले वर्ष (1985) के आरम्भ में भी मैंने उन्हें आशीर्वाद दिया था कि उनका व्यापार बढ़े। 1985 के अन्त में श्रीमती रुथ बुश को काफी लाभ हुआ। उन्होंने अपने घर के लिए और अपने सुपुत्र डैविड के लिए खर्च किया। यह बिलकुल उचित बात थी। किन्तु उनके मन में यह शंका रही कि उन्होंने मानवता मन्दिर के लिए कुछ नहीं किया। इसी कारण श्रीमती रुथ ने बार-२ मुझे पत्रों में लिखा कि उसने गुरु की आज्ञा का पालन नहीं किया। उसने एक दिन ऐसा अनुभव किया कि उसके कान में कोई कह रहा है "तुम्हें सज़ा मिलेगी तुम अपने दफ्तर मत जाओ।". उसने अपने कई ग्राहकों को टेलीफोन कर दिया कि वह काम नहीं करेगी। उसके बड़े लड़के रिचर्ड ने मुझे अमेरिका से कई बार टेलीफोन किया और कहा "आप स्वयं आकर ही मेरी माता को इस हालत से निकाल सकते हैं"। मेरा यह अचानक अमेरिका का दौरा सफल रहा। हालाँकि मैं अमेरिका में केवल 7 दिन ही रहा। लेकिन रोज़ाना बीसों बार पूर्व; पश्चिम, उत्तर, दक्षिण से दूर-दूर से टेलीफोन आते रहे और अमेरिका, वैस्टइण्डीज़, इंग्लैण्ड और स्विटज़रलैण्ड के श्रद्धालु और प्रेमी सत्संगी हर रोज़ मेरे सम्पर्क में रहे। श्रीमती ग्लोरिया ने कहा कि उन दिनों मेरे अमेरिका आने से वहाँ का वातावरण अच्छा हो गया। श्रीमती ग्लोरिया का यह विश्वास है कि मेरे अमेरिका में जाने और वहाँ पर सत्संग देने से विश्व के नेताओं में विश्व शान्ति की भावना उत्पन्न हो जाती है और जहाँ-2 पर आपत्ति की सम्भावना होती है वह आपत्ति टल जाती है।

मैं आपको श्रीमती ग्लोरिया के इन विचारों से इसलिए जानकारी करा रहा हूँ क्योंकि इस महिला को सिद्धि प्राप्त है और करोड़पति होते हुए भी उसे कोई अहंकार नहीं है। उसने अपने जीवन में कई भारत से आये हुए गुरुओं से सम्पर्क किया और उन्हें धन भी दिया किन्तु अन्त में उनके पाखण्ड को देखकर निराश हो गई। जब से वह मेरे सम्पर्क में आई और बाद में परमदयाल जी महाराज से साक्षात्कार किया, तो उन्होंने महसूस किया कि भारत में सच्चा रास्ता दिखाने वाले सन्त भी मौजूद हैं। श्रीमती ग्लोरिया हमारी आचार्य भी हैं और अब उन्होंने मानवता धर्म की सेवा करने के लिए अपने करोड़ों के व्यापार से छुट्टी ले ली है।

मुझे पिछले वर्ष ही स्विटजरलैण्ड में रहने वाले डा० परसराम जी अग्रवाल के ज्येष्ठ पुत्र श्री घनश्याम अग्रवाल से उनके यहाँ जाने का निमन्त्रण मिला था किन्तु मैं वहाँ इसलिए न जा सका क्योंकि मेरी वापसी टिकट के आधार पर मैं भारत लौटते समय और कहीं पर यात्रा भंग नहीं कर सकता था। इस बार जब मैं भारत से अमेरिका जाने लगा तो मैंने सोचा कि मैं जाती दफा या आती दफा घनश्याम के पास रुक सकता हूँ। भाग्य की यह सलाह थी कि मैं जाती दफा ही वहाँ रुकूं किन्तु मेरे मन में यही प्रेरणा उठी कि मैं आती बार ही घनश्याम के पास सत्संग देने के लिए अपनी यात्रा भंग करूँ।

2 जनवरी को मुझे जिनेवा स्विटजरलैण्ड के लिए सायंकाल 3 बजे वाशिंगटन से T.W.A. की उड़ान 744 से रवाना होना था। मैंने 1 जनवरी श्री बॉबमैकवीन के घर बिताई थी क्योंकि उसी दिन मेरा छोटा लड़का प्रियदर्शी भी हवाई जहाज से ब्लूमिंगटन इण्डियाना से मेरे पास पहुँच गया था। उससे आध्यात्मिकता के बारे में बहुत अच्छा

वार्तालाप हुआ। मैंने इसे कभी भी योग साधना करने के लिए नहीं कहा किन्तु पिछले दो वर्षों से उसे स्वयं ही सुरत-शब्द योग में रुचि हो गई है। वास्तव में इसने परमदयाल जी महाराज के सत्संग भी सुने हुए थे और कई बार उनसे आशीर्वाद प्राप्त कर चुका था। परमदयाल जी महाराज के विचारों के सम्बन्ध में प्रियदर्शी का यह कहना है कि महाराज जी पश्चिम के विख्यात दार्शनिक किरकेगार्ड और फ्रांस के विख्यात दार्शनिक सार्त्र की भाँति निर्भीक और सच्चे मानव-वादी दार्शनिक थे। वह परमदयाल जी के प्रति अगाध श्रद्धा रखता है और उनके जीवन काल में उनसे बहुत प्रेम करता था। परमदयाल जी महाराज भी उसे विशेष प्यार और आशीर्वाद देते थे। मुझे अब महसूस हो रहा है कि प्रियदर्शी के मन पर परमदयाल जी के सत्संगों का और पिछले 4-5 वर्षों से मेरे उन सत्संगों का गहरा प्रभाव पड़ता रहा है, जो उसने विशेषकर अमेरिका में सुने हैं। वह शुरू से ही एक सच्चा मानववादी है और किसी भी व्यक्ति के प्रति अन्याय बिलकुल सहन नहीं कर सकता। मैंने इसके बारे में कई बार सत्संगों में उसकी इस प्रवृत्ति पर प्रकाश डाला है।

मैं यह कह सकता हूँ कि जब मैं प्रियदर्शी से अपने विचारों के सम्बन्ध में बातचीत करता हूँ तो उसके प्रश्नों और उसकी आलोचना का नतीजा यह होता है कि मैं हमेशा सन्तमत के सम्बन्ध में एक नये परिणाम पर पहुँचता हूँ। इस विषय में मैं फिर कभी लिखूंगा। यहाँ पर इतना कह देना काफी है कि प्रियदर्शी चरित्र का बहुत ऊँचा है, एक पक्का और दृढ़ निश्चय वाला प्रेममय मानववादी है जो हर एक जरूरतमन्द व्यक्ति को हर प्रकार की सहायता देता है। कई बार वह हज़ारों मील दूर जाकर भी दूसरों की

समस्याओं को सुलझाता है। इस बार प्रियदर्शी ने अपने विचारों को प्रकट करते हुए किसी प्रकार का वादविवाद नहीं किया। इससे यह प्रतीत होता है कि वह योग साधना के कारण आन्तरिक रूहानी तरक्की कर रहा है।

उसी दिन प्रियदर्शी श्रीमती थैल्मा कार्टर और बॉब मैकीवन मुझे हवाई अड्डे पर विदा करने के लिए गये। दूसरे दिन प्रातःकाल 8 बजे मैं जिनेवा स्विटज़रलैण्ड पहुँच गया। वाशिंगटन में दफ्तर बन्द होने के कारण मुझे स्विटज़रलैण्ड का वीज़ा प्राप्त नहीं हुआ था किन्तु वहाँ पहुँचने पर वहाँ के इम्मीग्रेशन अधिकारी ने टेलीफोन द्वारा स्विटज़रलैण्ड के उच्चतम अधिकारी से मेरे वीजा के लिए आज्ञा प्राप्त की और एक विशेष वीजा जारी किया। यह मालिक की मौज थी और घनश्याम अग्रवाल का प्यार था कि मुझे स्विटज़रलैण्ड में प्रवेश करने की आज्ञा मिल गई।

घनश्याम ने मुझे बताया कि जिस दिन मैं वहाँ पहुँचा तो उसके स्टोर में सबसे ज्यादा बिक्री हुई। यह उसका विश्वास था। उसने मुझे परमदयाल जी महाराज का वह अन्तिम पत्र दिखाया, जिसमें उन्होंने लिखा था "प्यारे बेटे घनश्याम ! मैं अमेरिका जा रहा हूँ। चलोचली का समय है। मैं वापिस आती दफा ही तेरे पास ठहरूंगा। तुम मन्दिर की सहायता करते रहना।" घनश्याम ने यह पत्र मुझे इसलिए पढ़वाया कि उसका पूर्ण विश्वास है कि मेरा वहाँ जाना साक्षात् परमदयाल जी का जाना था। सम्भवतया उसी के इसी विश्वास के कारण ही मैंने यह निश्चय किया था कि स्विटज़रलैण्ड में अमेरिका जाते समय नहीं बल्कि भारत लौटती बार ही रुकूंगा। घनश्याम के विश्वास और मालिक की मौज ने मुझे ऐसा करने पर मजबूर किया।

इसी मौज के आधीन ही स्विटज़रलैण्ड का दौरा विशेष

प्रकार से कामयाब रहा। तीन दिनों के अन्दर दो सत्संग हुए। पाँच जनवरी को श्री जयसल के घर पर जो सत्संग हुआ उसमें भारत के, स्विटज़रलैण्ड के, राजदूतावास के कुछ अधिकारियों के परिवार भी सम्मिलित हुए। उनमें से वहाँ के भारतीय राजदूत Sh. A. S. Chib की योग्य पत्नी भी सम्मिलित हुई। उन्हें मेरे सत्संग में केवल रुचि ही नहीं हुई बल्कि उन्होंने कहा कि इस सत्संग के फौरन बाद मैं उनके घर पर चलूं और वहाँ पर ही शाम का भोजन करूँ! उनके पति विशेष कारण से और कुछ अस्वस्थ होने से सत्संग में सम्मिलित नहीं हो सके थे।

मुझे यह मालूम नहीं था कि Sh. A. S. Chib मुझे उस समय से जानते थे जब वह 1983 में वाशिंगटन में भारतीय दूतावास में राजनैतिक मिनिस्टर थे। जब मैं उनके घर पर पहुँचा तो स्विटज़रलैण्ड में बसे हुए एक भारतीय मुसलमान व्यापारी मौजूद थे। श्रीमती चिब ने बातचीत के दौरान में भारत में और विश्व में धर्म के नाम पर होने वाले अत्याचारों का ज़िक्र करते हुए कहा कि जिस मानव धर्म की व्याख्या मैंने सत्संग में की थी वही मानव जाति को विनाश से बचा सकता है। इस प्रकार एक सत्संग सा आरम्भ हो गया जिसमें मैंने यह बताया कि धर्म के नाम पर होने वाले अत्याचारों का कारण धर्म के प्रवर्तकों अवतारों, ऋषियों और सन्तों की शिक्षा नहीं है बल्कि उनके अनुयायियों के द्वारा उस शिक्षा पर न चलकर और मनमुख होकर सत्य और अहिंसा के असूलों का भंग करना है। मैंने यह बताया कि वैज्ञानिक एक विज्ञान के अवतार के द्वारा उसके अनुभव पर आधारित द्रव्य सम्बन्धी सत्य को खोज करने की दृष्टि से प्रयोगशालाओं में अनुभव करने के बाद उस सत्य का समर्थन करते हैं और उसके स्वरूप के सम्बन्ध में एक राय

कायम करते हैं। मिसाल के तौर पर दो हज़ार पांच सौ वर्ष पहले एक पश्चिमी वैज्ञानिक ने परमाणु के स्वरूप के सम्बन्ध में अपने आन्तरिक अनुभव के आधार पर बताया कि परमाणु में एक केन्द्र है, उसके चारों ओर इलैक्ट्रोन, प्रोटोन परिक्रमा करते हैं और उस परमाणु में अनन्त शक्ति छिपी हुई है। इस वैज्ञानिक दार्शनिक का नाम डैमोक्राइटस (Democritus) था। इसके बाद भौतिकी के दार्शनिकों ने हज़ारों वर्ष तक परमाणु के इस स्वरूप को मानकर अपने-2 देशों में और अपनी-2 प्रयोगशालाओं में हज़ारों प्रयोग किये। हमारे ही युग में सन् 1945 में इन सभी प्रयोगों से प्राप्त ज्ञान के आधार पर अमेरिका के एक रेगिस्तान में प्रयोग किया गया। उस प्रयोग में अणुबम का विस्फोट हुआ जिससे यह साबित हुआ कि विज्ञान का परमाणु सम्बन्धी सत्य एक व्यापक सत्य है। उस सत्य को सभी वैज्ञानिक विभिन्न जातियों से, विभिन्न देशों से और विभिन्न संस्कृतियों से सम्बन्ध रखते हुए भी समान रूप से स्वीकार करते हैं। वैज्ञानिकों का यह परस्पर सहयोग इसलिए होता रहा है और हो रहा है क्योंकि उन्होंने अपनी-2 प्रयोगशाला को दूसरों के लिए बन्द नहीं किया न ही दूसरों की प्रयोग-शालाओं के अनुभवों का विरोध किया है।

मैंने इसी व्याख्या के आधार पर यह बताया कि धर्म के सम्बन्ध में ईश्वर सम्बन्धी सत्य की खोज में धर्म के अनुयायियों ने अपने-2 गुरु और अवतार की सत्य की व्याख्या और उसके अनुभव करने की विधि को तिलांजलि देकर केवल अपने धर्म के प्रवर्तक को ही एकमात्र ईश्वर का ज्ञाता मानकर उसकी शिक्षा का तिरस्कार करके न तो अपने अनुभव के आधार पर मानवरूपी प्रयोगशाला में प्रयोग किया और न ही दूसरे धर्मों की प्रयोगशालाओं में

प्राप्त सत्य की ओर ध्यान दिया। न ही केवल इतना बल्कि हरएक धर्म ने मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघररूपी बाहरी प्रयोगशालाओं के दरवाजे भी दूसरों के लिए बन्द कर दिये। उन्होंने न ईश्वर का प्रेम पर आधारित अनुभव किया और न दूसरों को करने दिया। इसके फलस्वरूप मानव जाति खण्ड-खण्डित हो गई और धर्म के नाम पर अत्याचार जन-संहार, घृणा और युद्धों का बाज़ार गर्म हो गया। सत्य तो यह है कि सभी धर्म के प्रवर्त्तकों ने मानवी प्रेम को, ईश्वर को पाने का एक मात्र मार्ग स्वीकार किया है। वह धर्म, धर्म ही नहीं है जो प्यार और अहिंसा को आधारभूत नियम नहीं मानता। विडम्बना तो यह है कि कट्टरवादी तथा कथित धार्मिक व्यक्ति अपने धर्म का आचरण ही नहीं करता। यदि एक हिन्दु सच्चा हिन्दु हो जाये, एक मुसलमान सच्चा मुसलमान हो जाये, एक यहूदी सच्चा यहूदी हो जाये, एक ईसाई सच्चा ईसाई हो जाये, एक जैन सच्चा जैन हो जाये और एक सिक्ख सच्चा सिक्ख हो जाये तो धर्म के नाम पर नफरत के स्थान पर प्रेम, और युद्ध के स्थान पर शान्ति का प्रसार हो सकता है।

मेरी इस व्याख्या को सुनकर भारतीय राजदूत A. S. Chib ने कहा कि उन्होंने ऐसी सच्चाई कभी नहीं सुनी थी। उन्होंने यह विचार व्यक्त किया कि मानवता मन्दिर का एक केन्द्र स्विटज़रलैण्ड में अवश्य खुलना चाहिए उन्होंने इस कार्य में पूरा सहयोग देने का वचन दिया। मैंने इस विचार को साकार करने के लिए स्विटज़रलैण्ड की राजधानी बर्न में एक अस्थाई समिति बना दी है। मालिक की मौज से मैं गया तो घनश्याम को मिलने था, लेकिन हुआ यह कि परमदयाल जी की जन्म-शताब्दी के उपलक्ष्य में नये केन्द्र खोलने का कार्य भी अपने आप सम्पन्न हो

गया। मैं 6 जनवरी प्रातःकाल जिनेवा से रवाना होकर 7 जनवरी प्रातःकाल 8 बजे देहली पहुँच गया।

दो दिन देहली और फरीदाबाद में रहकर मैं 10 जनवरी को प्राजःकाल 6 बजकर 45 मिनट पर शाने पंजाब से रवाना हुआ। उसी दिन 12½ बजे दोपहर जालन्धर पहुँचा। यहाँ पर जालन्धर के श्री गुरुचरन दास बजाज, डा० तलवार, श्री एस. एल. सेठी, श्री सतीश खन्ना और श्री पवन कुमार मुझे लेने के लिए आये हुए थे।

18 जनवरी को मानवता मन्दिर में मासिक सत्संग आयोजित हुआ जिसमें भारी संख्या में सत्संगी होशियारपुर से और दूर-दूर से आकर सम्मिलित हुए। इस सत्संग में सद्गुरु के नज़दीक आने के प्रभाव की व्याख्या की गई है। यह सत्संग इसी महीने के मानव मन्दिर में छापा जा रहा है। 20 जनवरी को हम दक्षिण के दौरे के लिए होशियारपुर से रवाना हुए। कुछ घण्टे चण्डोगढ़ श्री विजय नरेश नेगी के निवास स्थान पर विश्राम करके उसी दिन सायंकाल 7 बजे देहली पहुँच गये। 22 सायंकाल 7 बजे हम G.T. एक्सप्रैस से नई दिल्ली स्टेशन से अहेरी के लिए रवाना हो गये। दक्षिण के दौरे का हाल अगले मासिक सन्देश में दिया जायेगा।

वास्तव में सत्संग का दौरा मेरे लिए और मेरे साथ जाने वाले लोगों के लिए एक तपस्या ही होती है। तपः के सम्बन्ध में हम दो महीने पहले वाणी एवं वाङ्मय तप की चर्चा कर रहे थे। मैंने आपको यह बताया था कि मधुर वचन का तप इसलिए उपयोगी है, क्योंकि इससे दूसरे जीवों को सुख मिलता है, जब कि कटु वचन से प्राणियों को दुःख पहुँचता है। दुःख देना हिंसा है और सुख देना अहिंसा है। अहिंसा को परमधर्म इसलिए माना गया है क्योंकि इस

व्यापक नियम में सत्य, ब्रह्मचर्य, अस्तेय (चोरी न करना) और अपरिग्रह (अपनी भौतिक आवश्यकताओं को कम करना) आदि नैतिक नियम समाविष्ट हो जाते हैं। यदि कोई व्यक्ति अहिंसा का पालन करते हुए यह कहे कि वह कटु वचन तो बोलेगा किन्तु अहिंसा नहीं करेगा तो वह व्यक्ति भ्रम में रहेगा। कटु वचन बोलने से दूसरों के मन पर जो ठेस लगती है वह तलवार के घाव से भी ज्यादा दुःखदायी होती है। घरों के अन्दर सास-बहू की लड़ाई अक्सर कटु वचन के बोलने से ही होती रहती है जिस घर में कटु वचन बोलने से क्रोध और कलह होता रहता है वहाँ पर चारों तरफ से मुसीबतें आती रहती हैं। आप अगर अपनी वाणी पर संयम रखें तो उससे न ही केवल आपके घर पर मुसीबतें नहीं आयेंगी बल्कि सुख और शान्ति का राज्य भी होगा। कटु वचन हानिकारक होने के नाते निराशा-वादी विचारों को पैदा करता है। मधुर वचन हितकारक होने के कारण आशावादी विचारों को जन्म देता है। जहाँ आशावादी विचार होंगे वहाँ हमेशा सफलता होगी और सारे परिवार में प्रेम और आनन्द का वातावरण बना रहेगा। सन्त कभी भी निराशावादी विचार नहीं रखते हैं। इसी कारण सन्तों के सम्पर्क में आने वाले सभी लोग सुखी, प्रसन्न और मुदित (खुश) रहते हैं।

हितकारक भाषण से केवल परिवार का ही नहीं बल्कि समाज का, राष्ट्र का और विश्व का भी भला हो सकता है। कई बार केवल कटु वचन बोलने से राष्ट्रों का इतिहास बदल जाता है। यहाँ पर मैं आपको भारत के इतिहास का एक उदाहरण देना चाहता हूँ। मैंने बाल्यकाल से स्वयं भारत की स्वतन्त्रता के संग्राम में हिस्सा लिया था। महात्मा गाँधी कभी कटु वचन नहीं बोलते थे। उनके मधुर

भाषण के कारण हिन्दु, मुसलमान, पारसी, सिक्ख, जैन और ईसाई सभी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में मिलकर बर्तानिया के साम्राज्य का विरोध कर रहे थे। यह विरोध अहिंसावादी था। इस अहिंसा के आन्दोलन में श्री मोहम्मद अली जिन्नाह भी भाग ले रहे थे। किसी मामले पर पं० जवाहर लाल नेहरू से मतभेद होने के कारण श्री मोहम्मद अली जिन्नाह ने कांग्रेस से त्याग पत्र दे दिया। वह एक अच्छे वकील थे इसलिए वह इंग्लैण्ड में बस गये और वकालत करने लगे। उनकी वकालत वहाँ पर खूब चली और वह मालामाल हो गये।

1930 में बर्तानिया सरकार ने भारत के सभी कांग्रेस के नेताओं को लन्दन में गोलमेज़ कान्फ्रेंस पर बुलाया। गोलमेज़ कान्फ्रेंस का मतलब यह था कि बर्तानिया के अधिकारी प्रधानमन्त्री आदि और भारत के नेता भी समान थे, कोई छोटा या बड़ा नहीं था। सभी गोलाकार में बैठे थे। उस कान्फ्रेंस में महात्मा गाँधी महामना मदन मोहन मालवीय और श्री जवाहर लाल नेहरू भी थे। गाँधी जी के बोलने के ढंग से अंग्रेज़ी लोग प्रभावित हो गये और अन्त में उन्होंने यह फैसला किया कि भारत को पहले प्रान्तीय आज़ादी और फिर राष्ट्रीय आज़ादी दे दी जायेगी किन्तु श्री जवाहर लाल नेहरू के बोलने के ढंग से कटु वचनों के कारण भारत का विभाजन हो गया। इन दोनों उदाहरणों को इस मासिक सन्देश में देना लाभदायक होगा।

महात्मा गाँधी इंग्लैण्ड में भी एक चादर और एक लंगोटी पहन कर ही गये थे। महामना मदन मोहन मालवीय जी अपने पीने के लिए गंगाजल के टीन के टीन साथ ले गये थे। जब महात्मा गाँधी लन्दन की सड़क पर पैदल चल रहे थे अंग्रेज़ लोगों और बच्चों की भीड़ दोनों तरफ थी तो एक

बालक ने गाँधी जी से पूछा "मिस्टर गाँधी where are your pants" (गाँधी जी आपका पजामा कहाँ है ?" गाँधी जी ने मुस्कराते हुए जवाब दिया "My dear son British Govt. have stolen away my pants. I have come to recover them...(मेरे प्यारे बेटे तुम्हारी बर्तानिया हकूमत ने मेरा पाजामा चुरा लिया है। मैं उसे वापिस लेने के लिए आया हूँ।) जब यह वार्तालाप समाचार पत्रों में निकला तो बर्तानिया के लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़ा। इसी सम्बन्ध में गाँधी के असूल पर चलने की एक और बात भी यहाँ कह देनी उचित होगी। बर्तानिया के बादशाह और भारत के शहनशाह जॉर्ज पंचम ने गाँधी जी की बकिंघम महल में प्रीतिभोज के लिए बुलाया। बर्तानिया की सभ्यता के मुताबिक ऐसे प्रीतिभोज पर पैण्ट, कोट पहनना और टाई लगाना जरूरी होता है किन्तु महात्मा गाँधी ने कहा "मैं तो लंगोटी और चादर के साथ ही महल में जाऊँगा। यदि यह मंजूर नहीं है तो मैं जॉर्ज पंचम से मिलने को तैयार नहीं हूँ। उनकी इस सच्चाई की भाषा को सुनकर जार्ज पंचम ने एक विशेष आज्ञापत्र निकाला और महात्मा गाँधी को लंगोटी और चादर में ही महल में प्रीतिभोज के लिए आने का निमन्त्रण दिया।

श्री जवाहर लाल नेहरू ने लन्दन में रहने वाले उन मित्रों से बातचीत की जो श्री मोहम्मद अली जिन्नाह के भी घनिष्ठ मित्र थे। उन्होंने बातों-२ में कहा "भई जिन्नाह को कह दो कि अगर वह कांग्रेस पार्टी से त्यागपत्र न देता तो आज हमारे साथ शहनशाह जार्ज पंचम के महल पर निमन्त्रित होता। अब उसे कौन पूछता है ?" जब जिन्नाह को यह कटु सन्देश सुनाया गया तो वह आगबबूला हो गया। उसने मित्रों को कहा "मैं जवाहर लाल नेहरू को ही नहीं,

सारी कांग्रेस पार्टी को इस अपमान के बदले में मज़ा चखाऊँगा।" उसके दूसरे ही दिन उसने अपनी सारी सम्पत्ति बेच दी और भारत आकर मुस्लिम लीग को उत्तेजित किया। इसके फलस्वरूप भारत का विभाजन हुआ जिसमें लाखों जानें गईं और वह जिन्नाह जो इस्लाम के असूलों के विरुद्ध शराब भी पीता था, पाकिस्तान की इस्लामी सल्तन्त का पहला अध्यक्ष बनकर कायदे आज़म कहलाया। इस उदाहरण से यह साबित हो जाता है कि अनापास कटु शब्दों के कहने से राष्ट्रों का इतिहास बदल जाता है।

यही कारण है कि वाणी की तपस्या में यह भी कहा गया है कि यदि सत्य भी बोलो तो मधुर वचनों में बोलो। तप की यह व्याख्या अगले मासिक सन्देश में जारी रखी जायेगी। इन शब्दों के साथ मैं आप सबको सद्गुरु रूप मानते हुए सच्चे दिल से सद्भावना देता हूँ और चाहता हूँ कि आप शरीर से स्वस्थ, मन से सुखी आत्मा से आनन्दित और सुरत से परम शान्ति का अनुभव करें।

सबको राधास्वामी!

आपका फक़ीरमय
मानव

परमसन्त हजूर मानव दयाल
डा. आई. सी. शर्मा जी महाराज

— का —

माह मार्च 1987 का राजस्थान का सत्संग टूर-प्रोग्राम

22-3-87 —सल्वान पब्लिक स्कूल ओल्ड राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली।

—सत्संग 9 से 12 बजे दिन

23, 24-3-87 —अलवर सत्संग
श्री मूल चन्द गाँधी, वकील
ब्रह्मचारी चौक, अलवर (राज०)

25-3-87 सायं — भीलवाड़ा सत्संग
26-3-87 प्रात: व सायं श्री जुगल किशोर शराफ़
27-3-87 प्रात: काशीपुर, भीलवाड़ा।

28-3-87 सायं — जैपुर सत्संग
29-3-87 प्रात: व सायं श्री महाराज कृष्ण शर्मा जी
16 C (A) मोती मार्ग
बापू नगर; जैपुर (राज०)

—श्री अर्जुन लाल छापरवाल
A-5, जे. डी. ए. कालोनी,
लाल कोठी, गाँधी नगर, जैपुर।
टेलीफोन नं० 68721

30-3-87 —जैपुर से प्रस्थान तथा 31 मार्च 87 को होशियारपुर आगमन।

अति आवश्यक सूचना

मानवधाम

"मानवधाम" कालोनी के लिए ज़मीन का क्रय अनुबन्ध (Agreement to sell) अन्तर राष्ट्रीय मानवता सोसाईटी ने कर लिया है। लगभग एक महीने की अवधि में ज़मीन का बैनामा सोसाईटी को कर लेना है। अन्यथा सोसाईटी को हर्जा/खर्चा देना पड़ सकता है। कुछ सत्संगियों ने अपने-अपने प्लाट के लिए तीन हज़ार रुपये की अग्रिम राशि सोसाईटी को भेजी है।

"मानवधाम" के लिए प्रस्तावित ज़मीन राजघाट, दिल्ली से लगभग 27 किलोमीटर दूर; मेरठ रोड पर, मौज़ा दुहाई में लबे सड़क स्थित है। पलाट, "मानवधाम" में पक्के पट्टे पर (on perpetual Lease) दिया जायेगा। पलाट लेने वाला व्यक्ति सोसाईटी की अनुमति से ही अपने पलाट की किसी अन्य व्यक्ति को हस्तान्तरित (Transfer) कर सकता है।

पलाट के लिए, जिन व्यक्तियों ने सोसाइटी को तीन हज़ार रुपये की अग्रिम-राशि भेज दी है, उनसे निवेदन है कि 15-4-1987 तक, 27000/- रुपये की शेष धन-राशि सोसाईटी को अवश्य भेज दें। यदि किसी कारण वे एक मुश्त 27000/- रुपया न भेज पायें तो वे कम से कम 15000/- रुपये 15-4-1987 तक अवश्य भेज दें तथा शेष धन राशि 12000/- रुपये तीन महीने के अन्दर भेज दें।

जिन को "मानवधाम" में प्रस्तावित ज़मीन पसन्द न आये या सोसाईटी की उपरोक्त शर्तें मंजूर न हो वे 15-4-87 तक अपनी दी हुई 3000/- रुपये की अग्रिम धन-राशि वापस लेकर अपने पलाट के अलाटमेन्ट को रद्द करा सकते हैं।

सेक्रेटरी :
मानवता मन्दिर, होशियारपुर।

प्रार्थना

राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
अलख अगम और अनामी ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
परम सन्त का रूप धरा, जीवों पर उपकार किया।
सीधा सच्चा मार्ग दिया, आये धर पद धामी
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी
बन कर आये परम फ़कीर, हरने सब जीवों की पीर ।
परम दयालु दानी वीर, नाम दान के दानी
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
राम भी हो और कृष्ण भी तुम ।
तुम महावीर और बुद्ध गौतम ।
अक्षर ब्रह्म और पुरुषोत्तम, सब नामों में अनामी ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
मानवता का किया प्रचार, निज अनुभव का दे दिया सार ।
ऐसे गुरु को बारम्बार, नमामि नमामि नमामि ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
दाता दयाल के प्यारे तुम, मानव के रखवारे तुम।
निर्गुण और सगुण भी तुम, सब के अन्तर्यामी ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।

Regd. No. 36265/74 MARCH. 10th 1987

MANAV MANDIR NWHSP—7

ADDRESS

To

938 Sh. Shinde Vithal
S/o Arjan Rao Gouli Gudda
Banswada Post &
Tq. Banswada Distt. Nizamabad
(A.P.)

Phone : 2022

From :

MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR-146001

Shiv Dev Rao Press Manavta Mandir, Hoshiarpur (Pb.)